IGKV/PUB/2024/T. BI/10

छत्तीसगढ़ में प्रमुख सब्जियों की खेती

संचालनालय अनुसंधान सेवायें

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

इं.गां.कृ.वि./प्रका./त.पु./2024/10

प्रेरणाश्रोत : **डॉ. गिरीश चंदेल**
माननीय कुलपति, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मार्गदर्शन : **डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी**
संचालक अनुसंधान
संचालनालय अनुसंधान सेवाएं, इं.गां.कृ.वि., रायपुर (छ.ग.)

डॉ. नीरज शुक्ला
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष
सब्जी विज्ञान विभाग, इं.गां.कृ.वि., रायपुर (छ.ग.)

लेखन : **डॉ. धनंजय शर्मा**
सह-संचालक अनुसंधान एवं प्रमुख वैज्ञानिक, सब्जी विज्ञान विभाग
डॉ. चन्द्रप्रकाश खरे
प्रमुख वैज्ञानिक, पौध रोग विभाग
डॉ. जितेन्द्र त्रिवेदी
प्रमुख वैज्ञानिक, सब्जी विज्ञान विभाग
डॉ. सुनिधि मिश्रा
वैज्ञानिक सब्जी विज्ञान विभाग

सम्पादन एवं मुद्रण : **डॉ. एच.सी. नन्दा,** प्रभारी (तकनीकी प्रकोष्ठ)
डॉ. आर.आर. सक्सेना, सह संचालक अनुसंधान
डॉ. पी.के. जोशी, सह संचालक अनुसंधान
डॉ. धनंजय शर्मा, सह संचालक अनुसंधान
विश्वविद्यालय तकनीकी प्रकोष्ठ
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

प्रकाशन वर्ष : 2024

प्रतियां : 500

संचालनालय अनुसंधान सेवायें
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

छत्तीसगढ़ में
प्रमुख सब्जियों की खेती

लेखकगण

डॉ. धनंजय शर्मा
डॉ. चन्द्रप्रकाश खरे
डॉ. जितेन्द्र त्रिवेदी
डॉ. सुनिधि मिश्रा

सम्पादन एवं मुद्रण
विश्वविद्यालय तकनीकी प्रकोष्ठ
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) 492012

संचालनालय अनुसंधान सेवाएं
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

Prof. (Dr.) Girish Chandel
डॉ. गिरीश चंदेल
Vice-Chancellor
कुलपति

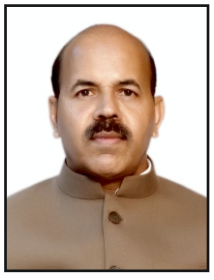

INDIRA GANDHI KRISHI VISHWAVIDYALAYA
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय
Krishak Nagar, Raipur - 492012
कृषक नगर, रायपुर - 492012
Chhattisgarh, INDIA
छत्तीसगढ़, भारत

No. PA/VC/188/2024/508
Date : 30/09/2024

संदेश

छत्तीसगढ़ में सब्जी उत्पादन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। सब्जियों के उत्पादन की नई तकनीकों जैसे उन्नत बीज, नर्सरी तकनीक, टपक सिंचाई, पौधरोपण, सहारे की विधि के साथ ही उर्वरक तथा कीट–व्याधि प्रबंधन की उचित जानकारी होना आवश्यक है। सब्जी विज्ञान विभाग के वैज्ञानिकों डॉ. धनंजय शर्मा, डॉ. जितेन्द्र त्रिवेदी, डॉ. सी.पी. खरे एवं डॉ. सुनिधि मिश्रा द्वारा इस पुस्तिका में छत्तीसगढ़ में पैदा की जाने वाली प्रमुख सब्जियों की उन्नत उत्पादन तकनीक की जानकारी दी जा रही है। तैयार पुस्तिका ''छत्तीसगढ़ की प्रमुख सब्जियों की खेती'' किसानों के लिए ज्ञानवर्धक एवं उपज बढ़ाने में सहायक होगी। मैं लेखकों को इस महत्वपूर्ण लेखन के लिए शुभकामनाऐं देता हूँ।

(गिरीश चंदेल)

DIRECTORATE OF RESEARCH SERVICES

संचालनालय अनुसंधान सेवायें

INDIRA GANDHI KRISHI VISHWAVIDYALAYA, RAIPUR - 492012 (C.G.)

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर - 492012 (छ.ग.)

डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी
संचालक अनुसंधान सेवायें
Dr. Vivek Kumar Tripathi
Director Research

S.No. 1621
Date : 30.09.2024

संदेश

पिछले दो दशकों में छत्तीसगढ़ राज्य सब्जियों के उत्पादन में देश के मानचित्र पर प्रमुख रूप से उभरा है। वर्तमान में लगभग 5 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में 69 लाख मैट्रिक टन सब्जियों के उत्पादन के साथ 13.81 टन प्रति हेक्टेयर उत्पादकता प्राप्त हो रही है। सब्जियों की खेती में किसान भाईयों को किस्मों के चुनाव व पौध रोपण से लेकर फलन में आने तक प्रत्येक अवसर पर उचित मार्ग दर्शन की आवश्यकता पड़ती है। उचित जानकारी के अभाव में वे सब्जियों की भरपूर पैदावार नहीं ले पाते। इसका प्रमुख कारण सब्जियों की खेती करने के वैज्ञानिक तकनीकों के ज्ञान का अभाव, गुणवत्तायुक्त बीजों की अनुपलब्धता, जलवायु परिवर्तन, पर्यावरणीय कारक एवं सही समय पर रोग व्याधियों से समूचित बचाव के ज्ञान का अभाव इत्यादि है।

उपरोक्त को ध्यान रखते हुए इंदिरा गाँधी कृशि विश्वविद्यालय द्वारा ''छत्तीसगढ़ की प्रमुख सब्जियों की खेती'' शीर्शक से पुस्तिका प्रकाशित की जा रही है जिससे किसानों को सब्जियों की वैज्ञानिक खेती की जानकारी उपलब्ध होगी जिससे सब्जियों की खेती के बारीक तकनीकों को समझने में आसानी होगी एवं किसानों को लाभ होगा। इस पुस्तिका के सभी लेखकों को बधाई एवं शुभकामनाएँ।

(विवेक कुमार त्रिपाठी)

अनुक्रमणिका

क्र	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	टमाटर	1
2.	बैगन	3
3.	मिर्च	6
4.	गोभीवर्गीय सब्जियाँ	8
5.	लौकी	11
6.	करेला	14
7.	कुँदरू	16
8.	सेम	18
9.	आलू	21
10.	प्याज	24
11.	अरबी	27
12.	पालक	29
13.	मेथी	31
14.	धनिया	33

टमाटर

टमाटर सब्जी फसलों में एक महत्वपूर्ण शाकीय फसल है, जिसमें यह विटामिन ए, सी, पोटेशियम और अन्य खनिज भरपूर मात्रा में पाए जाते है। इसका प्रयोग जूस, सूप, पाउडर और कैचअप बनाने के लिए भी किया जाता है। इस फसल के प्रमुख उत्पादक प्रदेश बिहार, छत्तीसगढ़, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, महांराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश और पश्चिमी बंगाल है।

जलवायु : टमाटर उष्ण ऋतु वाली फसल है। छत्तीसगढ़ के अधिकांश क्षेत्र में ठंड कम पड़ने के कारण यहां की जलवायु इस फसल के लिए उपयुक्त है। इसके बीज के अच्छे अंकुरण के लिए 25 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उत्तम पाया गया है। वैसे टमाटर के बीजों का 10 डिग्री सेन्टीग्रेड से 30 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान तक भी अंकुरण होता है। टमाटर में 14 डिग्री सेन्टीग्रेड से 24 डिग्री सेन्टीग्रेड तक तापमान रहने पर अधिकतम फूल आते हैं।

भूमि : टमाटर की फसल रेतीली भूमि से लेकर भारी काली मिट्टी (कन्हार) में ली जा सकती है। बलुई दोमट मिट्टी जिसमें जल निकास की अच्छी व्यवस्था हो, इस फसल के लिए उत्तम होती है। 6 से 7 पी.एच. मान वाली भूमि में इस फसल को लिया जा सकता है।

जातियां : पूसा अर्ली ड्वार्फ, स्वीट–72, पंजाब छुहारा, पूसा गौरव, पूसा रुबी, डी.व्ही.टी– 2, सी.ओ.–3 नवीन, पंत टमाटर–3, एन.एस.–815, अर्का रक्षक, अविनाश–2, सलेक्सन–7

बीज दर : ओपन पोलिनेटेड किस्मों में 400–500 ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर एवं संकर किस्मों में 150 ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकता होती है।

खेत की तैयारी : खेत की तैयारी हेतु मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई तदोपरान्त 3–4 जुताई देशी हल अथवा डिस्क हैरो से करें। इसके बाद पाटा अवश्य चलावें एवं आखिरी जुताई के पहले 250–300 क्विंटल अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट या वर्मी कम्पोस्ट खेत में फैला दें।

खाद एवं उर्वरक : टमाटर के फसल में ओपन पोलिनेटेड किस्मों के लिए औसतन 100 किलो नत्रजन, 80 किलो स्फुर एवं 60 किलो पोटाश की आवश्यकता प्रति हेक्टेयर होती है। संकर जातियों के लिए 213 किलो नत्रजन, 150 किलो स्फुर एवं 150 किलो पोटाश की आवश्यकता प्रति हेक्टेयर होती है। नत्रजन की आधी मात्रा एवं स्फुर एवं पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई के समय देना चाहिए। शेष नत्रजन की मात्रा 2 बराबर भागों में बांटकर रोपाई के 30 एवं 45 दिन बाद क्रमशः दें।

रोपाई : टमाटर के पौधे सामान्यतः 25–30 दिन में रोपाई योग्य हो जाते हैं लेकिन जहां तापमान में कमी हो ऐसे स्थानों में बुवाई के बाद 5–6 हफ्ते भी लग सकते हैं। रोपाई करते समय ध्यान रखें कि लाइन से लाइन की दूरी 60 से.मी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 45 से.मी. रहे। संकर किस्मों को 1.2–1.5 मी. की दूरी पर बने चौड़ी मांदा में पौधों को 60–75 सें.मी. की दूरी पर रोपण करना चाहिए। रोपाई के तुरन्त बाद पौधों को पानी देना न भूलें। रोपाई हमेशा दोपहर में 3 बजे के बाद ही करें ताकि पौधों को तेज धूप से शुरू की अवस्था में बचाया जा सके।

सिंचाई : टमाटर की फसल को पानी की कमी एवं अधिकता दोनों ही परिस्थितियों में नुकसान होता है। सर्दियों में 10–15 दिन के अन्तराल से एवं गर्मियों में 6–7 दिन के अन्तराल से हल्का पानी देते रहें। अगर संभव हो सके तो पौधे की बढ़वार, एवं अच्छी पैदावार के लिये ड्रिप इरह्नगेशन द्वारा सिंचाई करनी चाहिए।

निंदाई-गुड़ाई : रोपाई के बाद टमाटर की फसल में प्रारंभिक 30–45 दिन फसल की बढ़वार की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण होते है। समान्यत: खुरपी या हैन्ड वीडर से 30, 50 एवं 70 दिनो पश्चात् खरपतवार की सफाई करनी चाहिए तथा निंदानाशकों को रोपाई के एक दिन पूर्व खेत में छिड़काव करें। ध्यान में रखें कि नींदानाशक का उपयोग करते समय खेत में थोड़ी नमी उपलब्ध हो। नींदानाशक जैसे मेट्रिब्यूज़िन 150 – 200 ग्राम/एकड़, (क्विज़लोफ़ाप–इथाईल 5 ईसी) 20 ग्राम/एकड़ का छिड़काव करें। सेज घास जैसे मोथा, दूब, फास, आदि को गुड़ाई कर जड़ से निष्कासित करें।

सहारा देना : टमाटर की लम्बी बढ़ने वाली किस्मों को विशेष रूप से सहारा देने की आवश्यकता होती है। पौधों को सहारा देने से फल मिट्टी एवं पानी के सम्पर्क मे नही आते जिससे फल सड़ने की समस्या नही होती है। सहारा देने के लिए रोपाई के 30 से 45 दिन के बाद बांस या लकड़ी के डंडों में विभिन्न ऊँचाईयों पर छेद करके, तार बांधकर तथा पौधों को सुतली की सहायता से तारो के साथ बांधते है। इस प्रक्रिया को स्टेकिंग कहा जाता है।

एकीकृत कीट एवं रोग नियंत्रण :

गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें एवं पौधशाला की क्यारियाँ धरातल से ऊंचाई पर बनाये। मृदा में पाये जाने संक्रमित रोगों को समाप्त करने लिये गर्मी में फार्मेल्डिहाइड का घोल मृदा में मिलाकर पॉलथिन से 20–25 दिनों के लिये ठककर रखें इसके अतिरिक्त जैव कवकनाशी जैसे ट्राईकोडर्मा को मृदा में अच्छी तरह से मिला दें।

पौधशाला की मिट्टी को कश्वपर अश्वक्सीक्लोराइड के घोल से बुवाई के 2–3 सप्ताह बाद छिड़काव कर उपचारित करें। पौध रोपण के समय पौध की जड़ों को वीटावेक्स पावर या ट्राइकोडर्मा के घोल मे 10 मिनट तक डुबो कर रखें। पौध रोपण के 15–20 दिन के अंतराल पर चेपा, सफेद मक्खी एवं थ्रिप्स के लिए इमीडाक्लोप्रिड (0.7 मि.ली. प्रति लीटर) या एसीटामिप्रीड का 2 से 3 छिड़काव करें। माइट की उपस्थिति होने पर ओमाइट (0.3 मि.ली. प्रति लीटर) का छिड़काव करें।

फल भेदक इल्ली एवं तम्बाकू की इल्ली के लिए क्लोरपाइरीफॉस +साइपरमेथ्रिन का 2.50 मि.ली.प्रति लीटर पानी की दर से प्रयोग करना चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज: टमाटर के फलों के रंग बदलने की अवस्था में (जब हरे से गूलाबी–पीले होना शुरू होते है) तोड़ लेना चाहिए। बाजार में अच्छा भाव मिलने हेतु इस तरह से नवीनतम तकनीक का उपयोग करने पर ओपन पोलिनेटेड जातियों में 250–300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर एवं संकर जातियों में 600–800 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है।

★★★★★

बैगन

बैगन एक ऐसी शाकीय फसल है, जिसकी उत्पत्ति भारतवर्ष में ही हुई है। छत्तीसगढ़ में बैगन की खेती सफलतापूर्वक की जाती है। बैगन की कास्त के मुख्य बिंदुओं पर जानकारी नीचे दी गई है :–

जलवायु: बैगन की शीत ऋतु की अपेक्षा उष्ण ऋतु में ज्यादा बढ़वार एवं उपज होती है। इसे 13–21 डिग्री सेन्टीग्रेड औसतन तापमान की आवश्यकता होती है इसलिए इसकी रोपाई दिन का औसत तापमान 18.3 से 21.1 डिग्री सेन्टीग्रेड होने पर ही की जानी चाहिए। न्यूनतम तापमान 13 डिग्री सेन्टीग्रेड से कम एवं अधिकतम 38 डिग्री से.ग्रे. से ज्यादा होने पर अधिकांश किस्मों में फल लगना बंद हो जाते हैं।

भूमि का चयन: बैगन की खेती के लिए भी 6–6.8 पी.एच. मान वाली जमीन की आवश्यकता होती है। बलुई दोमट मिट्टी जिसमें जल निकास की अच्छी व्यवस्था हो, इस फसल के लिए उत्तम होती है। बैगन की खेती के लिये जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

प्रमुख किस्में :

(अ) गोलाकार किस्में: पूसा परपल राउण्ड, अर्का नवनीत, पूसा हाइब्रिड–6, पूसा हाइब्रिड–9, एन.डी.बी. एच.1 व 2, मुक्ताकेशी, पंजाब बहार, पूसा उत्तम।

(ब) लंबे आकार वाली किस्में : पूसा परपल लांग, अर्का कुसुमकर, जूनागढ़ लांग, पूसा अनुपम, अर्का केशव, अर्का निधि, अर्का द्विरिश।

(स) छोटे आकार वाली किस्में : ए.बी.एच.–1, एम.बी.एच.–10, एम.बी.एच.–39, मोहिनी, पूसा कांति, पूसा हाइब्रिड–5, पूसा अनुपम।

(द) संकर किस्में : ए.आर.बी.एच.–242, पूसा हाइब्रिड–6, पूसा हाइब्रिड–5, पी.बी.एच.–6, पी.बी.एच. –1, पी.एच., पी.एच.9 ।

छत्तीसगढ़ हेतु अनुसंधान आधारित अनुशंसित जातियाँ

बैगन लम्बे खुले परागण वाली जातियाँ: पंजाब सदाबहार : के.एस.–331 पी.पी.एल., आई.व्ही.बी.एल.–9 छत्तीसगढ़ सफेद बैगन–1

खाद एवं उर्वरक: बैगन की खेती के लिये 250 से 300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद आखिरी जुताई से पहले खेत में बिखेर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त रोपाई के समय 40 कि.ग्रा. नत्रजन, 80 कि.ग्रा. स्फुर एवं 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से बेसल ड्रेसिंग के रूप में दें। शेष नत्रजन की मात्रा दो बराबर भागों में बाट कर रोपाई के 30–40 दिन अथवा 60 दिन पश्चात् क्रमशः दे।

बुवाई एवं बीज दर :

बैंगन	बीज दर (ग्रा.)	कतार से कतार (से.मी.)	पौधे से पौधे की दूरी (से.मी.)	नाइट्रोजन (कि.ग्रा.)	स्फूर (कि.ग्रा.)	पोटाश (कि.ग्रा.)	उपज (क्वि./हे.)
ओपन पॉलीनेटेड	400–500	90	60	120	80	60	200–225
संकर	200						300–350

बीज को बोने से पूर्व वीटावेक्स पावर या बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। बैगन में बीज को पहले नर्सरी में बुवाई कर, पौधे तैयार किये जाते हैं छत्तीसगढ़ की जलवायु में बैगन पूरे वर्ष उगाया जा सकता है। बैगन की बुवाई वर्ष में तीन बार की जा सकती है।

फसल	बीज बुवाई का समय	रोपाई का समय
प्रथम फसल	जनवरी–फरवरी	फरवरी–मार्च
द्वितीय फसल	मई–जून	जून–जुलाई
अंतिम फसल	सितम्बर–अक्टूबर	अक्टूबर–नवम्बर

रोपाई: बैगन के पौधे 25–30 दिन में रोपाई के योग्य हो जाते हैं। पौधों का जितना भाग नर्सरी से उखाड़ने के बाद जमीन में था उतना ही भाग रोपाई के समय भी जमीन के अंदर रहे एवं पौधों के पास की मिट्टी अच्छी तरह अंगुलियों से दबा दें। रोपाई के तुरंत बाद पौधों को पानी देना न भूलें। रोपाई हमेशा अपरान्ह में 3 बजे के बाद ही करें ताकि शुरू की अवस्था में पौधों को तेज धूप से बचाया जा सके।

सिंचाई : साधारणत: रबी मौसम में 10–12 दिनों के अंतराल पर एवं गर्मी के दिनों में 4–5 दिनों में सिंचाई करनी चाहिए। टपक सिंचाई होने पर पौधे की बढ़वार, मौसम एवं मिट्टी के प्रकार के आधार पर सिंचाई देना चाहिए।

निंदाई-गुड़ाई : रोपाई के बाद प्रारंभिक 30–45 दिन फसल की बढ़वार की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण होते है। इन दिनों में ही खरपतवार इतनी तेजी से बढ़ते हैं कि कई बार खेत में फसल की अपेक्षा खरपतवार ही दिखाई देते हैं, अत: 45 एवं 65 दिन पर खुरपी या हैण्ड वीडर से निदाई गुड़ाई करे तथा आवश्यकता पड़ने पर रासायनिक विधि का भी उपयोग करे।

उपज : बैगन की उपज किस्म तथा लगाने के समय आदि पर निर्भर करती है। समुचित कृषि क्रिया अपनाकर सामान्यत: एक हेक्टेयर से 300–700 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है।

प्रमुख कीट :

तना एवं फल छेदक : इस कीट की इल्ली सबसे पहले कोमल शाखाओं में प्रवेश कर अंदर ही अंदर खाती रहती है, जिससे शाखा मुरझा कर लटक जाती है और बाद में सूख जाती है। छोटे पौधे प्रकोप होने पर मुरझाकर मर जाते हैं। बाद में फल लगने पर इल्ली बाह्य दल पुंज (केलिक्स) के पास से फल के अंदर चली जाती है तथा फल के गूदे को खा जाती है। इस कारण गूदा खराब हो जाता है। इस कीट के प्रकोपित फल टेढ़े–मेढ़े हो जाते हैं तथा खाने योग्य नहीं रहते हैं। यह भेदक कीट बैगन के फलों को बहुत अधिक नुकसान पहुँचाता है

नियंत्रण : इस कीट के प्रभावशाली नियंत्रण के लिए निम्नानुसार उपाय अपनायें :–

1. खेत में मुरझाये हुए प्ररोहों एवं क्षतिग्रस्त फलों को तोड़कर उनके अंदर पायी जाने वाली इल्ली/इल्लियों सहित नष्ट कर देना चाहिए।

2. एक ही खेत में लगातार लम्बे समय तक बैगन की फसल नहीं लेना चाहिए।

3. इस कीट का प्रकोप होने पर प्रोफेनोफॉस 2 मि.ली./लीटर का छिड़काव करें।

प्रमुख रोग :

1. **फामोप्सिस अंगमारी एवं फल सड़न** : फलों में रोग का आक्रमण होने पर उन पर गड्ढेदार धब्बे बनते हैं व अंदर का भाग सड़ जाता है। रोगकारक कवक मिट्टी में व बीजों में पनपता रहता है, रोग का प्रसार मुख्य रूप से बीजों के अतिरिक्त वर्षा की बूंदों, कृषि यंत्रों व कीटों के द्वारा होता है। आर्द्र वातावरण व लगभग 36 डिग्री से. तापक्रम रोग फैलाव के लिए अनुकूलतम परिस्थितियाँ होती है।

   रोग प्रबंधन : बोने के पूर्व बीजों को गर्म पानी में 50ीं सेल्सियस तापक्रम पर आधे घंटे डुबोकर उपचारित कर लेना चाहिये। कवकनाशी दवाओं जैसे– जिनेब (2 ग्राम) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम) या वीटावेक्स पावर (1.5 ग्राम) या हैक्जाकोनाजोल (1.5 ग्राम) दवा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। रोग की गंभीरता को देखते हुए छिड़काव नर्सरी अवस्था में 10 दिन के अंतराल से करना चाहिये।

2. **अंगमारी (रोगकारक- स्क्लेरोटिनियाँ स्क्लेरोशियम, कवक)** : रोगी पौधे की पत्तियां सूखकर मुरझा जाती हैं। कभी–कभी एक या एक से अधिक शाखायें सूखती हैं, परंतु पौधे के तने के निचले भाग पर रोग संक्रमण के फलस्वरूप पूरा पौधा ही सूखकर मर जाता है।

   रोग प्रबंधन : फसल समाप्त होने के बाद फसल अवशेष एकत्र कर जला देना चाहिये। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें, ताकि ऊपर की मिट्टी नीचे दब जाये, इससे कवक संरचनायें भी दब कर नष्ट हो जाती हैं। कवकनाशी दवाओं जैसे– कार्बेन्डाजिम (0.25:) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.5 मिली/लीटर का 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव भी लाभकारी होता है

3. **उकठा (जीवाणु म्लानि) (रोगकारक- स्यूडोमोनास सोलेनेसियेरम जीवाणु)** : रोग के लक्षण सर्वप्रथम पौधे के ऊपरी भाग की पत्तियों के मुरझाने से शुरू होता है। पौधे बौने रह जाते हैं व पत्तियों में पीलापन दिखाई देता है व अंततोगत्वा पौधा मर जाता है। प्रभावित खेत में पौधे तेजी से सूखने लगते हैं।

   रोग प्रबंधन : फसल–चक्र अपनाना (लोबिया–मक्का–पत्ता गोभी, भिंडी–लोबिया– मक्का, मक्का–लोबिया–मक्का) चाहिये व मूंगफली की खली का प्रयोग रोग प्रबंधन में सहायक है। ट्राईकोर्डमा 10 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करना चाहिए। बीजोपचार में स्ट्रेप्टोमाइसिन दवा का 1 ग्राम/40 लीटर जल घोल में 30 मिनट तक डुबोना चाहिये। ब्लीचिंग पाउडर का 15 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की मात्रा भी रोग नियंत्रण हेतु अनुशंसित है या फिर रोग के लक्षण दिखाई देने पर कैप्टॉन 50 डब्लू.पी. का 800 ग्राम प्रति एकड़ के घोल का छिड़काव किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त सहनशील किस्मों का चुनाव करना चाहिए। पूसा परपल क्लस्टर, हिसार श्यामल जीवाणु म्लानि रोग के साथ–साथ लघु पत्र रोग के प्रति भी सहनशील प्रजातियां हैं व इसी तरह पंत सम्राट भी पत्ती धब्बा व फल गलन के प्रति रोग प्रतिरोधक क्षमता रखती है।

★★★★★

मिर्च

मिर्च भारत की एक मुख्य मसाला फसल है जिसे मुख्य रूप से नगदी फसल के रूप में उगाया जाता है, इसकी व्यवसायिक खेती कर अधिक लाभ कमाया जा सकता है। यह हमारे भोजन का प्रमुख अंग है, स्वास्थ्य की दृष्टि से मिर्च में विटामिन ए व सी पाये जाते है इसकी विभिन्न जातियों को अचार, सब्जी व पकी लाल मिर्च सुखाकर मसाले के रूप मे प्रयोग की जाती है।

जलवायु : मिर्च के लिए गर्म आर्द्र जलवायु अच्छी रहती है इसे उष्ण तथा उपोष्ण भागों मे सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है जिन क्षेत्रों में पाले का प्रकोप अधिक होता है वहां इसकी अगेती फसल लेनी चाहिए। अधिक तापक्रम पर फल नहीं बनते है तथा फूल एवं फलों का झड़ना प्रारम्भ हो जाता है।

भूमि का चयन : मिर्च की खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली कार्बानिक पदार्थ युक्त दोमट मिट्टी उपयुक्त रहती है। मृदा का पी.एच. मान 6 से 7.5 के बीच होना अधिक उपयुक्त रहता है।

उन्नत किस्में : काशी अनमोल–2, इंदिरा मिर्च–1, पुसा ज्वाला, पुसा सदाबहार, पन्त सी 1, पंजाब लाल, अर्का मेघना ,एल.सी.ए. 206., एल.सी.ए.–235, जवाहर मिर्च–218, जवाहर मिर्च–216, जे.सी.ए.–283,

नर्सरी तैयार करना : मिर्च की वर्ष में तीन फसलें ली जा सकती है। लेकिन प्राय: इसकी फसल खरीफ व गर्मी मे ली जाती है। पहले नर्सरी में बीजों की बुवाई कर पौध तैयार की जाती है। इसके लिए खरीफ की फसल हेतु मई–जून में तथा गर्मी की फसल हेतु फरवरी–मार्च में नर्सरी में बीजों की बुवाई करें। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए पौध तैयार करने हेतु 700–800 ग्राम बीज तथा संकर बीज 250 ग्राम प्रति हेक्टेयर की आवश्कता होती है। नर्सरी वाले स्थान की गहरी जुताई करके खरपतवार रहित बना कर एक मीटर चौड़ी, 3 मीटर लम्बी व 10–15 से.मी. जमीन से उठी हुई क्यारियां तैयार कर लें।

बीज व भूमि उपचार : बीजो की बुवाई से पुर्व 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम या वीटावेक्स पावर प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें जिससे बीज जनित रोगों का प्रकोप न हो सके। पौध शाला में कीड़ों के नियंत्रण हेतु 8 ग्राम कार्बोफ्यूरान 3 प्रतिशत कण प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से भूमि में मिलावें नर्सरी में विषाणु रोगों से बचाव के लिए मिर्च पौध को 50 मेश की सफेद नाइलोन नेट से ढककर रखें। 2–3 दिनों तक एवं बीज में समय पर हवा पानी के लिये खोलें।

रोपण : नर्सरी में बुवाई के 4–5 सप्ताह बाद पौध रोपने योग्य हो जाती है। इस समय इसकी पौध की रोपाई खेत मे करें। गर्मी की फसल में कतार से कतार की दूरी 60 से.मी. तथा पौधों के बीच दूरी 30 से 45 से.मी. रखें। खरीफ की फसल के लिए कतार से कतार की दूरी 45 से.मी. और पौध से पौध की दूरी 30 से 45 से. मी. रखें। रोपाई शाम के समय करें और रोपाई के तुरन्त बाद सिंचाई कर दें।

खाद एवं उर्वरक : खेत की अंतिम जुताई से पूर्व 150 से 250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद/कम्पोस्ट खेत में डाल कर भली–भांति मिला देवें। इसके अतिरिक्त मिर्च में अच्छी उपज लेने के लिए 125 किलो नत्रजन, 75 किलो फॉस्फोरस एवं 60 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी व फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा रोपण से पहले भूमि की तैयारी के समय तथा शेष नत्रजन को दो बराबर भागों में बाटकर रोपण से 25 व 45 दिनो बाद खडी फसल में डालकर सिंचाई करनी चाहिए।

सिंचाई एवं निदाई गुड़ाई : पौध रोपण के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करना अत्यन्त आवश्यक है। गर्मी में 5 से 7 दिन के अंतराल पर और बरसात में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। खरपतवार नियंत्रण हेतु समय–समय पर निदाई गुड़ाई करनी चाहिए। खरपतवार नियंत्रण हेतु ऑक्सीफ्लूरोफेन 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से पौध रोपण के ठीक पहले छिड़काव करें।

कीट प्रबंधन : सफेद मक्खी, (थ्रिप्स) हरा तेला: ये कीट पौधों की पतियों व कोमल शाखाओं का रस चूसकर कमजोर कर देते है। इनके प्रकोप से उत्पादन घट जाता है। नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोरोपिड 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। जरूरत होने पर 15–20 दिन बाद पुन: छिड़काव करें।

व्याधि प्रबंधन :

1. **आर्द्र गलन** : इस रोग का प्रकोप पौधे की छोटी अवस्था में होता है। जमीन की सतह पर स्थित तने का भाग काला पड़ कर कमजोर हो जाता है तथा नन्हें पौधे गिरकर मरने लगते हैं। नियंत्रण हेतु बीज को बुवाई से पूर्व थाइरम या केप्टान 3 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। नर्सरी में बुवाई से पूर्व 4 से 5 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से भूमि में मिलावें। नर्सरी आसपास की भूमि से 4 से 6 इंच उठी हुई भूमि में बनावें।

2. **श्याम वर्ण (एन्थ्रेक्नोज)**: पत्तियों पर छोटे–छोटे काले धब्बे बन जाते है तथा पतियाँ झड़ने लगती है। उग्र अवस्था में शाखाएँ शीर्ष से नीचे की तरफ सूखने लगती है। पके फलों पर भी बीमारी के लक्षण दिखाई देते है। नियंत्रण हेतु जीनेब या मेंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल के 2 से 3 छिड़काव 15 दिन के अन्तराल से करें।

3. **पर्णकुंचन व मोजेक विषाणु रोग**: पर्णकुंचन रोग के प्रकोप से पत्ते सिकुड़ कर छोटे रह जाते हैं व झुर्रियाँ पड़ जाती है। मोजेक रोग के कारण पत्तियों पर गहरे व हल्का पीलापन लिये हुए धब्बे बन जाते है। रोगों को फैलाने में थ्रीप्स एवं माइट सहायक होते है। नियंत्रण हेतु रोग ग्रसित पाधों को उखाड़कर जला देना चाहिए। रोग को आगे फैलने से रोकने हेतु डाइमिथोयट 30 ई.सी. (1–1.5 मिलीलीटर) प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

तुड़ाई एवं उपज : हरी मिर्च के लिए तुड़ाई फल लगने के 15–20 दिन बाद ही कर सकते हैं, परन्तु यदि सूखी लाल मिर्च के लिए तुड़ाई करनी हो तो एक या दो बार हरी मिर्च की तुड़ाई करें तथा पौधे पर ही पकने के लिए छोड़ दें। एक तुड़ाई से दूसरी तुड़ाई का अन्तराल 15–20 दिन का रखते हैं। फलों की तुड़ाई फल के पूर्ण विकसित होने पर ही करनी चाहिए। हरी चरपरी मिर्च की लगभग 100 से 150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा 15–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सूखी लाल मिर्च प्राप्त की जा सकती है।

★★★★★

गोभीवर्गीय सब्जियाँ

छत्तीसगढ़ में गोभीवर्गीय सब्जियाँ में पत्ता गोभी, फूल गोभी तथा गाँठ गोभी की खेती मुख्य रूप से की जाती है। इसमें फूल गोभी तथा पत्ता गोभी की व्यावसायिक स्तर पर खेती की जा रही है।

जलवायु: गोभीवर्गीय फसलों के लिये ठंडी और आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है। फूलगोभी में विभिन्न किस्मों में पौधे तैयार होने एवं उनकी बढ़वार के लिये अलग–अलग तापमान की आवश्यकता होती है। बंद गोभी के पौधों की बढ़वार एवं हेड (बंदा/शीर्ष) की वृद्धि के लिये औसतन 15 से 20 डिग्री से.ग्रे. एवं गाँठ गोभी के लिये 10–20 डिग्री से.ग्रे. तापमान उचित रहता है।

भूमि का चयन: गोभीवर्गीय फसलों की अगेती फसल लेने हेतु हल्की दोमट भूमि ज्यादा उपयुक्त होती है। मुख्य फसल हेतु बलुई–दोमट मिट्टी, जिसमें पोषक तत्व की मात्रा भरपूर हो, उपयुक्त होती है। बंद गोभी कन्हार जमीन पर भी अच्छी पैदावार देती है। इन फसलों के लिये 6 से 6.5 पी.एच. मान वाली जमीन उपयुक्त होती है।

बीज दर एवं नर्सरी : फूलगोभी और बंद गोभी को एक हेक्टेयर क्षेत्र में लगाने हेतु 400–500 ग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है। बीज की नर्सरी तैयार कर 25–30 दिन बाद रोपाई की जाती है।

खेत की तैयारी : खेत को मिट्टी पलटने वाले हल से दो बार अच्छी तरह जुताई करें। इसके बाद दो बार डिस्क हैरो या देशी हल से अच्छी तरह जुताई करे एवं पाटा चलायें। आखिरी जुताई से पूर्व 250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद/कम्पोस्ट खेत में बिखेर दे।

पौध रोपाई का समय एवं दूरी :

	फसल	रोपाई का समय	दूरी (से.मी.)
फूल गोभी	अगेती	जून–जुलाई	60X30 या 45X45
	मध्यम	अगस्त–सितम्बर	60X45
	देर	अक्टूबर–नवम्बर	60X60 या 60X45
बंद गोभी	अगेती	जुलाई–अगस्त	45X45
	मध्यम	सितम्बर–अक्टूबर	60X30 या 60X45
	देर	नवम्बर	60X60 या 60X45

उन्नत/संकर प्रजातियाँ :

फसल	अगेती	मध्यम	पछेती
फूल गोभी	पूसा शरद, काशी क्वारी, पूसा दीपाली, अर्ली कुआरी, पूसा कार्तिक, पूसा अर्ली सिंथेटिक, पूसा कार्तिक संकर, पूसा मेघना, पंत गोभी–3।	इम्प्रूब्ड जापानी, पंतगोभी–4, पूसा शरद पूसा अगहनी, पूसा शुभ्रा, पूसा हाइब्रिड–2 पूसा हिमज्योति, पूसा सिंथेटिक।	स्नोबाल समूह, पूसा शुभ्रा, पूसा स्नोबाल –2, काला पत्ता
बंद गोभी	अली ड्रमहेड, गोल्डन एकर, पूसा सिन्थेटिक, सितम्बर	हरी रानी गोल, पूसा ड्रम हेड, श्रीगणेश गोल	लेट ड्रम हेड

उर्वरक : फूल गोभी एवं पत्ता गोभी की ओपर पॉलिनेटेड क्सिमों के लिये नत्रजन 100 किलोग्राम, स्फुर 80 किलोग्राम तथा पोटाश 60 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर एवं संकर किस्मों में नत्रजन 120–150 किलोग्राम, स्फुर 80 किलोग्राम तथा पोटाश 80 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। नत्रजन की एक–तिहाई मात्रा एवं स्फुर, पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा को रोपाई के समय जिस लाइन में पौधों को लगाना है, उस लाइन के चार अंगुल बाजू में डालकर छोटी कुदाली से अच्छी तरह मिट्टी में मिला दें। शेष नत्रजन की दो–तिहाई मात्रा को बराबर–बराबर भागों में बाँटकर रोपाई के 25 एवं 40 दिन बाद दें।

सिंचाई : इस फसल में दो सिंचाई के बीच अधिक अंतर होने पर पौधों को आवश्यकतानुसार पानी नहीं मिल पाता एवं पौधों में पानी की कमी होने के पश्चात् सिंचाई करने पर फलों के फटने की संभावना बढ़ जाती है इसलिये भूमि में 50 प्रतिशत नमी होने का मौका कभी न दें। हमेशा मिट्टी में 60 से 70 प्रतिशत नमी होने पर सिंचाई अवश्य करें।

खरपतवार नियंत्रण : गोभीवर्गीय सब्जियों में पेन्डामेथलीन का 1 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से पौध रोपण करने से पहले छिड़काव करना चाहिये ताकि खरपतवार को उगने तथा बढ़ने का मौका ही न मिले। आवश्यकता पड़ने पर एक या दो बार निंदाई कर पौधों के बीच में खरपतवारों को नष्ट करें।

उपज :

फूल गोभी	अगेती	100–125 क्विंटल/हे.
	मध्य	150–175 क्विंटल/हे.
	पछेती	200–250 क्विंटल/हे.
बंद गोभी	अगेती	300–400 क्विंटल/हे.
	मध्य व पछेती	400–600 क्विंटल/हे.

गोभीवर्गीय सब्जियों में कीट नियंत्रण :

1. माहो : ये बहुत छोटे आकार के हरे–पीले रंग के कीट हैं। इस कीट के प्रौढ़ व शिशु बड़ी संख्या में पत्तियों एवं शीर्षो से रस चूसते हैं। फलस्वरूप पत्ते पीले पड़ जाते हैं और शीर्षो का विकास रूक जाता है, जिससे उपज में 20–25 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है। इस कीट के नियंत्रण के लिये इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का उपयोग किया जा सकता है ।

2 बंद गोभी की तितली : इस कीट की इल्ली प्रारंभिक अवस्था में समूह में रहकर पत्तियों को खाती हैं, इल्ली शीर्ष की ऊपरी पत्तियों को काट देती हैं, जिससे बंद गोभी का बाजार भाव कम हो जाता है इसकी नियंत्रण के लिये क्लोरेनट्रेनेलीप्रोल 18.5 एस.सी. 03 मि.ली. प्रति लिटर पानी का छिड़काव किया जा सकता है ।

3. हीरक पृष्ठ पतंगा : प्रारंभिक अवस्था की इल्लियाँ पत्तियों की निचली सतह पर खाते हुये छोटे–छोटे छिद्र बना देती है। तीव्र प्रकोप होने पर छोटे पौधे पत्तीविहीन हो जाते हैं इस कीट के द्वारा 50–80 प्रतिशत तक उपज में कमी आ जाती है।

नियंत्रण के उपाय :

1. प्रकाश प्रपंच/फेरोमोन प्रपंच का उपयोग करें।
2. बंद गोभी की तितली के लिये प्रतिरोधक क्षमता वाली किस्म को उगायें।
3. इन इल्लियों के नियंत्रण के लिये स्पाइनासेड 45 एस.सी. 04 मि.ली. प्रति लीटर पानी के दर से छिड़काव किया जा सकता है।
4. इल्लियाँ बड़ी होने पर फेनवलरेट 20 ई.सी. का 2.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
5. हीरक पृष्ठ पतंगा के नियंत्रण के लिये इनडॉक्साकार्ब 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

गोभीवर्गीय सब्जियों में रोग प्रबन्धन : फूल गोभी एवं पत्ता गोभी में पद गलन या डेम्पिंग ऑफ रोग तथा काला विगलन या ब्लैक रॉट नामक बीमारी का सबसे अधिक प्रकोप होता है।

1. **पद गलन या डेम्पिंग ऑफ रोग** : इस रोग का प्रकोप नर्सरी में पौध तैयार करते समय अधिक होता है। पौध का मिट्टी की सतह के पास वाला भाग गलने लगता है, जिससे पौधे गिरने लगते हैं तथा सम्पूर्ण पौधा सूख जाता है। कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें या डैन्चिंग करें।
2. **ब्लैक रॉट या काला विगलन** : इस रोग का प्रकोप होने पर पत्तियों के किनारों पर व्ही आकार के पीले धब्बे दिखाई देते हैं, जो पत्तियों की मध्य नस की तरफ फैलते हैं। इस रोग के आरंभिक लक्षण दिखाई देने पर एग्रीमाइसिन 100 को 200 पी.पी.एम. अर्थात् 2 ग्राम दवा 10 लीटर पानी में मिलाकर 10–12 दिन के अंतराल में कम से कम दो बार छिड़काव करें। यह रोग बीज जनित है। अतः बीज उपचार ब्लीचिंग पाउडर अथवा स्ट्रेप्टोसाइक्लिन दवा को 1 ग्राम प्रति लीटर की दर से घोल में बीज डुबोकर उपचार करें।

★★★★★

लौकी

छत्तीसगढ़ में गर्मी एवं वर्षा ऋतु के दौरान लगाई जाने वाली सब्जियों में लौकी का प्रमुख स्थान है।

उन्नत किस्में : पूसा संदेश, पूसा संतुष्टि, पूसा समृद्धि, काशी गंगा तथा अर्का बहार पूसा समर प्रॉलिफिक लाँग, पूसा समर प्रॉलिफिक राउण्ड, पूसा नवीन, वरद, विपुल–7, ए.आर.बी.जी.एच.–7, दिव्या (संकर जाति)।

भूमि का चुनाव : लौकी की सफलतापूर्वक खेती बलुई दोमट (सैण्डी लोम) तथा मटासी मृदा में की जा सकती है। हल्की भुरभुरी कार्बानिक पदार्थ युक्त मृदा, जहाँ पानी का जमाव न होता हो, एवं 5.5–6.5 पी. एच. मान वाली मृदा इस फसलो के लिए उपयुक्त पाई गई है। लौकी को उगाने हेतु खेत में पानी के निकास की समुचित व्यवस्था करना आवश्यक है।

जलवायु : गर्म एवं आर्द्र मौसम, कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती के लिये उपयुक्त है। फूल बनना, खिलना एवं परागण की क्रिया भी एक विशेष तापमान पर ही सम्पन्न होती है, बढ़वार और फूलने–फलने के लिये न्यूनतम तापक्रम 20 डिग्री से. तथा अधिकतम 30–35 डिग्री से. होना चाहिये।

भूमि की तैयारी : खेत में कतार एवं पौधों के बीच की दूरी के हिसाब से उचित दूरी पर गोबर की खाद (10–12 कि.ग्रा.) डालकर मिट्टी में अच्छी तरह मिलाकर थाले बनाना चाहिये। हर एक थाले में बुवाई से पूर्व 2–3 ग्राम फ्यूराडॉन (दानेदार दवा) बिखेर कर अच्छी तरह मिला देना चाहिये।

बीजोपचार एवं बुवाई : बीजोपचार हेतु बीज को फैले हुये एवं चौड़े मुँह वाले प्लास्टिक ट्रे में लेकर 2.5 ग्राम बाविस्टीन दवा प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से मिला देते हैं। खेत में बनाये हुये हर थाले में चारों तरफ 4–5 बीज 2–3 से.मी. गहराई पर बो देना चाहिये। इन थालों में अच्छी प्रकार से सड़ी हुई गोबर की खाद, नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की आपूर्ति क्रमशः यूरिया, सिंगल सुपर फोस्फेट एवं म्यूरेट ऑफ पोटास द्वारा करनी चाहिए। ग्रीष्म ;तु की फसल हेतु बीज को बुवाई से पूर्व 12–18 घण्टे तक पानी में रखते हैं। चूंकि बीजों का अंकुरण 20 डिग्री से कम तापमान पे ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है।

बीज दर : 3.5–4.0 कि./हे. कतार से कतार की दूरी 2.5 से 3.5 मीटर एवं पौधे से पौधे की दूरी 60 से 90 से.मी. रखना चाहिये।

उर्वरक : उर्वरक की मात्रा खेत में मिट्टी की जांच करने के उपरान्त प्राप्त होने वाली रिपोर्ट पर आधारित होनी चाहिये। 80–60–60 एन.पी.के. (कि./हे.) उर्वरक देते समय ध्यान रखें कि नत्रजन की आधी मात्रा तथा स्फुर एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय देना चाहिये। शेष नत्रजन की आधी मात्रा टॉप ड्रेसिंग के रूप में बुवाई के 30–40 दिन बाद देना चाहिये।

सहारा देना: इसके लिए बांस गाड़कर मचान बनाना चाहिए। सहारा देने से लतावाली सब्जियों में वृद्धि अच्छी होती है एवं अधिक फल लगते हैं। ऐसा करने से पौधों को धूप एवं हवा अच्छी तरह मिलती है। इससे कीड़े–मकोड़े एवं रोगों का प्रकोप भी कम होता है। अतः सहारा देने के काम को अच्छी ढ़ंग से करना चाहिए। मचान बनाने पर ही अधिक फलन एवं अच्छी उपज निर्भर करती है।

सिंचाई:- फसल की आवश्यकता अनुसार समय–समय पर पानी का प्रबन्ध करें तथा सिचांई व निदाई गुड़ाई करें। फूल आने के दौरान मृदा में नमी के अभाव से परागकण विकृत बनते हैं जिससे फसल उत्पादन कम हो जाता है। फलों के विकास के समय नमी के अभाव में फलों का आकार बिगड़ जाता है कभी–कभी खेत में थोड़े समय तक भी जल भराव होने से पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं एवं लता का विकास रुक जाता है। फलों की तुड़ाई के समय खेत की सिंचाई नहीं करनी चाहिये अन्यथा फलों की गुणवत्ता खराब हो जाती है।

उपज- एक हेक्टेयर फसल में औसत उपज 250–300 क्विं. प्राप्त की जा सकते है।

कीट व रोग प्रबंधन :

1. **चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्डयू) -** इसमें पत्तियों के दोनों सतहों पर सफेद रंग के कवक जाल के धब्बे दिखाई देते हैं। प्रभावित पत्तियां बाद में पीली होकर मुरझा जाती हैं।

   प्रबंधन - बरसात में फफूंदी रोग की संभावना अधिक होती है इसके बचाव हेतु डिनोकैप (कैराथेन) 1.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर हर 15 से 20 दिन के अंतराल में छिड़काव करते रहें।

2. **मोजेक -** मोजेक रोग एक विषाणु जनित रोग होता है। यदि रोग का प्रकोप शुरूआत में ही हो तो हानि अधिक होती है। कभी–कभी अंकुरण के बाद बीजपत्रीय अवस्था में रोग का आक्रमण हो जाता है, ऐसे पौधे तुरंत पीले पड़कर सूख जाते हैं।

   प्रबंधन: खरपतवारों को, जो विषाणुओं को शरण देते हैं, पहचान कर नष्ट कर देवें। संभवत: बीज स्वस्थ फसल से ही लेना चाहिये। व्हाइट फ्लाई, माइट तथा थ्रिप्स जो इस रोग को प्रसारित करते हैं इनके नियंत्रण के लिये कीटनाशियों का नियमित छिड़काव करें, जैसे–एसीटामिप्रिड 0.6–0.7 मि.ली. प्रति लिटर का छिड़काव करें ताकि कीट नियंत्रण में रहें।

3. **कद्दू का लाल भृंग (रेड पम्पकिन बीटल) -** इस कीट के शिशु व व्यस्क दोनों ही फसल को हानि पहुंचाते हैं। व्यस्क कीट पौधों के पत्ते टेढ़े मेढ़े करके छेद करते हैं।

   प्रबंधन- क्लोरपायरीफॉस डस्ट का उपयोग करें या इमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एस.जी. (1 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें।

4. **फल मक्खी (फ्रूट फ्लाई) :** कीट कोमल फलों में छेद करके छिलके के भीतर अंडे देती हैं। अंडों से इल्लियाँ निकलती हैं तथा फलों के गूदे को खाती हैं, जिससे फल सड़ने लगते हैं। क्षतिग्रस्त फल टेढ़े–मेढ़े हो जाते हैं तथा कमजोर होकर नीचे गिर जाते हैं। बरसाती फसल पर इस कीट का आक्रमण अधिक होता है।

प्रबंधन -

1. क्षतिग्रस्त तथा नीचे गिरे हुये फलों को नष्ट कर देना चाहिये।
2. सब्जियों के जो फल भूमि पर बढ़ रहे हों, उन्हें समय–समय पर पलटते रहना चाहिये।

3. प्रोफेनोफास 50 ई.सी (2.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें।
4. विष प्रलोभिकाओं का उपयोग : दवाई का साधारण घोल छिड़कने से वह शीघ्र सूख जाता है तथा प्रौढ़ मक्खी का प्रभावी नियंत्रण नहीं मिल पाता है। अतः कीटनाशक के घोल में मीठा, सुगंधित, चिपचिपा पदार्थ मिलाना आवश्यक है। इसके लिये कीटनाशक 500 ग्राम शीरा या गुड़ को 50 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार एक सप्ताह बाद पुनः छिड़काव करें।
5. खेत में ट्रेप फसल के रूप में मक्का या सनई की फसल लगायें। इन फसलों की ओर यह कीट आकर्षित होता है। ऐसी फसलों पर कीट का प्रकोप होने पर कीटनाशक का छिड़काव कर मक्खियों को नष्ट किया जा सकता है।

★★★★★

करेला

जलवायु :- करेले के उत्पादन के लिए छत्तीसगढ़ की गर्म एवं आर्द्र जलवायु अति उपयुक्त है। करेले कि बढ़वार के लिए न्यूनतम तापक्रम 20 डिग्री सेन्टीग्रेड तथा अधिकतम 35–40 डिग्री सेन्टीग्रेड होना चाहिए।

बीज की मात्रा :- 6.0–7.0 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। खेत में बुवाई हेतु कतार से कतार की दूरी 1.0– 2.5 मीटर रखनी चाहिए एवं कतारों के अंतर्गत 0.5–0.6 मीटर पर बनाये हुए हर थाल में 4–5 बीज 2–3 से.मी. गहराई पर बो देना चाहिए। ग्रीष्म ;तु की फसल हेतु बीज को बोवाई से पूर्व 12–18 घंटे तक पानी में रखते हैं। पॉलीथीन बैग में एक बीज/प्रति बैग ही बोते है। बीज का अंकुरण न होने पर उसी बैग में दूसरा बीज पुनः बोवाई कर देना चाहिए।

उन्नत किस्में :- ग्रीन लांग, फैजाबादी स्माल, जोनपुरी, झलारी, सुपर कटाई, सफेद लांग, ऑल सिज़न, हिरकारी, भाग्य सुरूची, मेघा–एफ 1, वरून–1 पूनम, प्रिया, तीजारवी, अमन नं.–24, नन्हा क्र.–13

खेत की तैयारी:- खेत में करेले की फसल लगाने के लिए सर्वप्रथम गोबर खाद 10–12 किलोग्राम डालकर मिट्टी में अच्छी तरह मिलाकर थाला बनाना चाहिए। हर एक थाले में बोवाई से पूर्व 2–3 ग्राम क्लोरोपाईरीफास ड़स्ट बिखेर कर अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।

रोपाई की विधि :- बीजों को नालियों के दोनो तरफ बुवाई करते है। नालियों की सिंचाई करके मेंड़ों पर पानी की सतह के ऊपर 2–3 बीज एक स्थान लगाये एवं अंकुरित हो जाने पर आवश्यकतानुसार छंटाई कर दे। बीज बोने से 24 घंटे पहले पानी में भिगोकर रखें, जिससे अंकुरण में सुविधा होती है।

खाद एवं उर्वरक :- करेला की फसल में औसरन 70 कि.ग्रा. नत्रजन, 50 कि.ग्रा. स्फूर एवं 50 कि.ग्रा. पोटाश की प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है उर्वरक देते समय ध्यान रखें की नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा स्फुर एवं पोटाश की पूरी मात्रा बोवाई के समय देना चाहिए। शेष नाइट्रोजन की आधी मात्रा टाप ड्रेसिंग के रूप में बोवाई के 30–45 दिन बाद देना चाहिए। मादा फूलो की संख्या बढ़ान एवं उपज में वृ) हेतु इथरेल 250 पी.पी.एम. सान्द्रता का उपयोग पौधे की दो एवं चार बीज पत्रीय अवस्था में कराना चाहिए। 250 पी.पी. एम. का घोल बनाने हेतु (0.25 मि.ली.) इथरेल प्रति लीटर पानी में घोलना चाहिए। करेले की फसल को सहारा देना अत्यंत आवश्यक है।

सिंचाई:- फसल की सिंचाई वर्षा पर आधारित है। साधारणतः प्रति 8–10 दिनों बाद सिंचाई की जाती है।

निंदाई एवं गुड़ाई :-प्राथमिक अवस्था में निंदाई गुड़ाई करके खेत को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। वर्षा ;तु में इस फसल को लकड़ी की सहायता से या मचान पर चढ़ाना चाहिए। करेले की फसल ड्रिप इरिगेशन पर भी ले सकते है।

फल तुड़ाई:- सब्जी के लिए फलों को साधारणतः उस समय तोड़ा जाता है, जब बीज कच्चे हों। यह अवस्था फल के आकार एवं रंग से मालूम की जा सकती है। जब बीज पकने की अवस्था आती है, तो फल पीले पीले होकर रंग बदल लेते है।

बीमारियां एवं रोकथामः-

1. **चूर्णित आसिता** :- पत्तियों पर सफेद पाऊडर सा बिखरा दिखाई देता है। रोग के प्रभाव से फलों के उत्पादन पर प्रतिकूल असर होता है। फल छोटे व उचित आकार के नहीं होते है।

   नियंत्रण - अन्य खरपतवारीय पौधों को मुख्य फसल के आस–पास से हटा देना चाहिए। विभिन्न कवकनाशी दवाऐं जैसे– केराथेन (2 प्रतिशत) या केलेक्सिन (0.1 प्रतिशत) या सल्फेक्स (0.3 प्रतिशत) का प्रयोग करें।

2. **आद्र गलन** :- इसके प्रभाव से तनों का जमीन की सतह से लगा हुआ भाग विगलित हो जाता है, और पौधा मर जाता है। कभी–कभी अंकुरण पूर्व ही सड़कर नष्ट हो जाता है।

   नियंत्रण :- इसके नियंत्रण हेतु बीजोपचार बाविस्टिन 2.5 ग्राम दवा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से करते है, तथा लंबी अवधि का फसल चक्र अपनाना जरूरी होता है।

3. **मोजेक** :- अंकुरण के बाद बीज पत्रीय अवस्था में रोग का आक्रमण हो जाता है, ऐसे पौधे तुरंत पीले पड़कर सूख जाता है। माहू कीट द्वारा रोग का फैलाव होता है। इन कीटों की कई प्रजातियां रोग को फैलाती है, रोग ग्रसित बीज द्वारा भी रोग संचरण होता है। कुछ खरपतवार जैसे चौलाई की प्रजातियां भी रोगकारक विषाणुओं को शरण देते है।

   नियंत्रण :- खरपतवार को जो विषाणुओं को शरण देते है, पहचान कर नष्ट कर देवें। संभवतः बीज स्वस्थ फसल से ही लेना चाहिए। कीटनाशियों का नियमित छिड़काव करें, जैसे इमिडाक्लोप्रिड (1 मि. ली. प्रति लीटर पानी) कीट नियंत्रण हेतु उपयोग में लाया जा सकता है।

★★★★★

कुन्दरू

कुंदरू एक लतावाली बहुवर्षीय सब्जी फसल है जो कि किसी सहारे के साथ तेजी से बढ़ती है यह अधिकतर गृह वाटिका में देश के सभी हिस्सों में उगायी जाती है। कम ठंड पड़ने वाले स्थानों पर यह लगभग सालभर फल देती है परन्तु जिन स्थानों पर ज्यादा ठंड पड़ती है वहां पर यह फसल 7–8 माह फल देती है यद्यपि यह एक अल्प उपयोगी सब्जी फसल है परन्तु छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश एवं बिहार के कुछ हिस्सों में किसान इसे व्यवसायिक स्तर पर भी उगाते हैं । भविष्य के बदलते हुए जलवायु परिवेश में कुंदरू एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल के रूप में देखी जा रही है।

जलवायु: कुंदरू की फसल के लिये गर्म तथा आर्द्र जलवायु सर्वाधिक उपयुक्त होती है। उत्तर भारत में ठंड के कारण बढ़वार बाधित हो जाती है एवं पौधा सुशुप्ता अवस्था में चला जाता है।

भूमि एवं भूमि की तैयारी: कुंदरू को लगभग सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है परन्तु कार्बनिक पदार्थ युक्त बलुई दोमट भूमि सर्वाधिक उपयुक्त होती है। इसमें लवणीय मिट्टी को सहन करने की भी क्षमता होती है। इसकी खेत की तैयारी 3–4 जुताई करके मिट्टी भुरभुरी बना लेते हैं।

उन्नत किस्में: इंदिरा कुंदरू–5, इंदिरा कुंदरू–35, सुलभा (सी. जी. – 23), काशी भरपूर (वी.आर.एस. आई.जी.–9)

खाद एवं उर्वरक: कुंदरू की अच्छी फसल लेने हेतु 60–80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40–60 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर डालते हैं। फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा फसल रोपण के समय तथा बाकी की नत्रजन की मात्रा को चार बार में जून या जुलाई से प्रति माह देना चाहिये । इसके साथ ही प्रति गड्ढे में 10 कि.ग्रा. गोबर की खाद एवं आधा किलो नीम खली मिलाने से कीड़े मकोड़े तथा बीमारियों का प्रकोप कम होता है। फसल प्रबंधन एवं रोपण: कुंदरू को मुख्यत: कटिंग से ही लगाया जाता है यह देखा गया है कि पुराने प्ररोह की मोटी तना कटिंग में अंकुरण तीव्र गति से होता है। फरवरी के अंतिम सप्ताह से 15 मार्च के दौरान 15–20 से.मी. लम्बी तथा 1.5 से 2.0 से.मी. मोटी कंटिग को पॉली बैग या सीधे जमीन में लगाते हैं। इन्हें अच्छी तरह तैयार किये गये गड्ढे जो कि 60 से.मी. व्यास के होते है पौधे से पौधे की दूरी 2.0 मी. तथा लाइन से लाइन की दूरी 2.00 मीटर रखते हैं।

सिंचाई: कुंदरू की फसल को गमह्न में 4–5 दिन के अंतर पर सिंचाई करनी चाहिये। फसल में पुष्पन एवं फलन के समय उचित नमी बनाये रखे। उचित जल निकास न होने तथा 18–24 घंटे तक पानी भरने की दशा में फसल पीली होकर सूख जाती है।

अंत: सस्य क्रियायें: खेत में खरपतवार प्रबंधन के लिए एक दो निदाई की आवश्यकता फसल की प्रारंभिक अवस्था में होती है। निदाई खुपह्न की सहायता से करते हैं तथा दो पंक्तियों के बीच में हल्की गुड़ाई भी कर देते हैं जिससे पौधों की जड़ों में वायु संचार पूर्ण रूप से हो सके।

ट्रेनिंग एवं प्रूनिंग: कुंदरू की फसल काफी वानस्पतिक वृद्धि करती है अत: इसे सहारे की आवश्यकता होती है। साधारणत पंडाल पद्धति में 1.5 से 1.75 मी. के सीमेंट के खम्बे, बांस के टुकड़े आदि के सहारे फसल को चढ़ाया जाता है। उत्तर भारत में ठंडक के कारण नवम्बर में फसल को जड़ से 30 से.मी. छोड़कर काट दिया

जाता है ।गृहवाटिका में इसे घरों की छतों पर, चाहरदीवारी पर भी चढ़ाकर उगाते हैं।

तुड़ाई : फलों की पहली तुड़ाई रोपण के 45–50 दिन पर होती है एंव बाद की तुड़ाई 4–5 दिन के अंतर पर करते रहते हैं।

उपज: हरे ताजे फलों की औसत उपज 300–400 क्विंटल/हे. प्राप्त होती है।

प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

1. **फल मक्खी** : इस कीट की सूण्डी हानिकारक होती है।प्रौढ़ मक्खी गहरे भूरे रंग की होती है।इसके सिर पर काले तथा सफेद धब्बे पाये जाते हैं।प्रौढ़ मादा छोटे, मुलायम फलों के छिलके के अन्दर अण्डा देना पसन्द करती है, और अण्डे से ग्रब्स (सूड़ी) निकलकर फलों के अन्दर का भाग खाकर नष्ट कर देते हैं। कीट फल के जिस भाग पर अण्डा देती है वह भाग वहाँ से टेढ़ा होकर सड़ जाता और नीचे गिर जाता है।

   नियंत्रण : गर्मी की गहरी जुताई या पौधें के आस पास खुदाई करें ताकि मिट्टी की निचली परत खुल जाए जिससे फलमक्खी का प्यूपा धूप द्वारा नष्ट हो जाये तथा शिकारी पक्षी उसे नष्ट करे दें।ग्रसित फलों को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए।आवश्यकतानुसार कीटनाशी जैसे क्लोरेंट्रानीलीप्रोल 18.5 एससी., (0.3 मिली प्रति लीटर) या डाईक्लारोवास 76 ईसी., (1.25 मिली प्रति लीटर) पानी की दर से भी छिड़काव कर सकते हैं।

प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

1. **मृदु चूर्णिल आसिता**: यह बीमारी अधिक आद्रता वाले मौसम में होती है जिसमें पुरानी पत्ती की निचली सतह पर सफेद गोल धब्बे बन जाते हैं।जो बाद में आकार एवं संख्या में बढ़ जाते हैं तथा पत्ती की दोनों सतह पर आ जाते हैं।बीमारी के अधिक प्रकोप के समय पत्तियाँ भूरे होकर सिकुड़ जाती है।

   नियंत्रण: इसके प्रबंधन हेतु बाविस्टीन 0.1 प्रतिशत का घोल का छिड़काव प्रति सप्ताह तीन सप्ताह तक बीमारी की प्रारम्भिक अवस्था में ही करें।

2. **कुंदरू की गाल मक्खी** : यह मक्खी पौधे के नरम तने में अण्डे देती है एवं तने का हिस्सा फल की तरह फूल जाता है।

   नियंत्रण : इसके प्रबंधन के लिए ऐसे प्रभावित तने को तोड़कर निकाल देना चाहिये। इसके लिये फीप्रोनिल (0.3 ग्रा) दानेदार कीटनाशक का उपयोग किया जाना चाहिए।

★★★★★

सेम

दलहनी कुल की सब्जियों में सेम का प्रमुख स्थान है। इसकी खेती सम्पूर्ण भारत वर्ष में सफलतापूर्वक की जाती है। मुख्य रूप से इसकी खेती मुलायम फलियों के लिए की जाती है परन्तु इसकी कुछ किस्मों का उपयोग दाल के रूप में किया जाता है । इसकी फलियों में रंग एवं आकार में काफी विभिन्नता पायी जाती है। इसकी लता को काटकर पशुओं के चारे के रूप में उपयोग किया जाता है। पोषक तत्वों की दृष्टि से सेम एक महत्वपूर्ण फसल है। इसमें प्रोटीन व खनिज तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें कार्बोहाइर्डेट, विटामिन्स, कैल्शियम, सोडियम, फास्फोरस, मैगनिशियम, पोटैशियम, आयरन, सल्फर, रेशा इत्यादि भी पाया जाता है। दलहनी फसल होने के कारण यह वायुमण्डलीय नत्रजन को मिट्टी में स्थिर कर भूमि को स्वस्थ एवं उपजाउ बनाती है।

जलवायु: सेम मूलत: गर्म जलवायु की फसल है। इसकी अच्छी पैदावार के लिए 18–300 डिग्री. से.गे. तापमान उपयुक्त होता है। असिंचित अवस्था में इसकी खेती की जा सकती है जहा कि 630–690 मि.मी. तक औसत वर्षा होती है।

मृदा: सेम की खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती हैं। अच्छे जल निकास वाली कार्बनिक पदार्थ युक्त बलुई दोमट से लेकर दोमट मृदा जिसका पी. एच. मान 6–7 के मध्य हो सेम की खेती के लिए उपयुक्त होती है। जल ठहराव की अवस्था इस फसल के लिए अति हानिकारक होती है।

उन्नत किस्में: काशी हरितमा, काशी खुशहाल (वी.आर. सेम – 3), इंदिरा सेम–1, पूसा अर्ली प्रोलिपिक, अर्का जय, कोकण भूषण, स्वण–उत्कृष्टी, बी. आर. सेम. – 11, पूसा सेम–2, पूसा सेम – 3, जवाहर सेम – 53, जवाहर सेम – 79, कल्याणपुर – टाइप, रजनी,

खाद एवं उर्वरक: अच्छी पैदावार के लिए 10–15 टन सड़ी गोबर की खाद भूमि की तैयारी के समय खेत में मिला देते हैं। इसके अलावा 20–30 कि.ग्रा. नत्रजन, 40–50 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 40–50 कि.ग्रा. पोटाश की प्रति हेक्टेयर आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय खेत में डालते हैं तथा नत्रजन की शेष मात्रा दो बराबर भागों में बाँटकर बुवाई के लगभग 20–25 दिन व 35–40 दिन बाद टाप ड्रेसिंग के रूप में करना चाहिए।

खेत की तैयारी: यदि खेत में नमी की कमी हो तो बुवाई से पूर्व खेत का पलेवा कर लेना चाहिए । बुवाई के पूर्व खेत की अच्छी तरह जुताई व पाटा लगाकर तैयार कर लेना चाहिए । बुवाई के समय बीज अंकुरण के लिए खेत मे पर्याप्त नमी होनी आवश्यक है।

बीज दर एवं उपचार: एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए लगभग 20–30 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बीज को बुवाई से पूर्व फफूँदनाशी रसायन कार्बेन्डाजिम की 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करनी चाहिए। इससे फसल की प्रारम्भिक अवस्था में मृदा जनित बीमारियों से सुरक्षा हो जाती है।

बुवाई का समय एवं विधि: सेम की बुवाई का सबसे उपयुक्त समय जुलाई–अगस्त है। सेम की बुवाई समतल खेत में या उठी हुई मेड़ों/क्यारियों में करनी चाहिए । उठी हुई मेड़ों या क्यारियों में बुवाई करना पौधों की अच्छी वृद्धि व अधिक उत्पादन के लिए उपयुक्त पाया गया है। लता वाली (पोल टाइप) किस्मों के लिए कतार

से कतार तथा पौध से पौध की दूरी क्रमश: 100 तथा 75 से.मी. रखते है।

खरपतवार नियंत्रण: फसल की प्रारम्भिक अवस्था में खेत को खरपतवार मुक्त रखने के लिए एक से दो निदांई–गुड़ाई पर्याप्त होती है। निदांई–गुड़ाई अधिक गहराई तक नहीं करनी चाहिए। वैसे खरपतवार नियंत्रण के लिए पूर्व खरपतवारनाशी जैसे पेन्डामेथालीन 1 किलो प्रति हेक्टर की दर से पानी में घोल बनाकर बुवाई के 48 घंटे के अन्दर छिड़काव करें। इससे 40–45 दिनों तक मौसमी खरपतवारों का नियंत्रण हो जाता है। इसके बाद यदि आवश्यक हो तो एक निदांई करनी चाहिए।

सहारा देना: लता वाली किस्मों को सहारा देना आवश्यक है। सहारा न देने की अवस्था में पौधे भूमि पर ही फैल जाते हैं तथा उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जिसके कारण गुणवत्तायुक्त उत्पादन में भारी गिरावट आ जाती है। सहारा देने के लिए पौधों की कतारों के समानान्तर 2–3 मीटर लम्बे बाँस / लकड़ी / एंगिल आयरन के खम्भों को 5–7 मीटर की दूरी पर गाड़ देते है । इन पर रस्सी या लोहे के तार खींचकर ट्रेलिस बनाकर लताओं को चढ़ा देते है। पौधों की बढ़वार के अनुसार रस्सी या तार की कतारों की संख्या 30–45 सेमी. के अन्तराल पर बढ़ाते जाते है।

पलवार का योग: बुवाई के तुरन्त बाद मल्च का उपयोग करना चाहिए। मल्चिंग करने से बीजों का जमाव मृदा ताप के बढ़ने के कारण अधिक होता है, खेत में नमी संरक्षित रहती है तथा खरपतवार नहीं उग पाते हैं जिसके फलस्वरूप पैदावार अनुकूल प्रभाव पड़ता हैं।

सिंचाई बन्धन: सामान्यत: बरसात के मौसम में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। फूल तथा फलन के समय खेत में नमी का अभाव नहीं होना चाहिए। अपर्याप्त नमी होने पर पौधे मुरझा जाते हैं जिसके कारण उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके लिए मृदा नमी को ध्यान में रखते हुए नियमित अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

तुड़ाई एवं भण्डारण: सब्जी के उपयोग के लिए हरी फलियों की तुड़ाई नर्म, मुलायम व हरी अवस्था में की जाती है। कुल मिलाकर 6–10 तुड़ाई की जाती है। सेम की हरी फलियों को 0–1.6 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान पर 85–90 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता पर 2–3 सप्ताह तक रखा जा सकता है।

प्रमुख कीट एवं नियंत्रण:

1. **माहो** - माहो काले रंग के होते हैं जिसकी शिशु एवं वयस्क दोनों अवस्था क्षतिकारक होती है एवं नये पत्तियों, शाखाओं तथा फलियों से रस चुसते हैं जिससे फसल की बढ़वार रूक जाती है ।

   नियंत्रण: पौधे के तने अथवा अन्य भाग जहाँ माँहू की कालोनी दिखाई दें उसको तोड़कर नष्ट कर दें एवं एजाडीरैक्टिन 5: (3 मि.ली.प्रति लीटर पानी) का 10 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करें।

2. **लीफ माईनर (पत्ती में सुरंग बनाने वाला कीड़ा)** : यह कीट प्रांरभिक अवस्था में ज्यादा हानिकारक होता है। मैगट पत्तियों में टेढ़े–मेढ़े सुरंग बनाकर पत्तियों के हरे भागों को खाकर खत्म कर देता है। सुरंगों के अन्दर ही मैगट प्यूपा में परिवर्तित होता है। प्यूपा भूरे या पीले रंग के होते हैं इनके प्रकोप से पत्तियाँ

मुरझाकर सूख जाती हैं और पौधा उपयुक्त रूप से फूल और फल नहीं दे पाता है। ज्यादा प्रकोप होने पर पूरी फसल सूखकर खत्म हो जाती है।

नियंत्रण : प्रतिरोधी किस्मों का चुनाव करना चाहिए। नत्रजन का संतुलित प्रयोग करना चाहिए अन्यथा ज्यादा प्रयोग से कीट का आक्रमण बढ़ जाता है। पौध के निचले भाग पर कीड़ों से प्रभावित पुरानी पत्तियों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। इसके नियंत्रण के लिए 4 प्रतिशत नीम गिरी चूर्ण का छिड़काव (40 ग्राम नीम गिरी) प्रति लीटर पानी में लाभकारी पाया गया है। कीटनाशक स्पीनोसेड 45 एस.सी. 0.4 मि.ली. प्रति लिटर पानी की दर से छिड़काव करें।

3. **फली छेदक** : शुरू की अवस्था में इसकी सूँड़ी फूल पर समूह के रूप में होते हैं जो आगे चलकर अलग–अलग फूलों पर फैल जाते हैं और बाद की अवस्था में फलियों को उनके अन्दर छेद करके खाते हैं। जिससे फलियाँ बिक्री हेतु अनुपयुक्त हो जाती हैं तथा पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

★★★★★

आलू

आलू की फसल छत्तीसगढ़ में मुख्यत: रबी के मौसम में की जाती है। छत्तीसगढ़ में आलू की खेती सफलतापूर्वक की जा रही है। छत्तीसगढ़ के मैनपाट क्षेत्र में खरीफ ऋतु में भी की जा रही है।

जलवायु: इसकी खेती के लिये ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। फसल की विभिन्न अवस्थाओं में लगभग निम्नांकित तापमान उपयुक्त होता है :–

1. पौधों की अंकुरण हेतु 24 डिग्री सेल्सियस।

2. पौधों की उचित वृद्धि एवं विकास हेतु 18 डिग्री सेल्सियस।

3. अधिकतम कंद के उत्पादन के लिये 20 डिग्री सेल्सियस।

मिट्टी : उचित जल निकास वाली रेतीली दोमट मिट्टी जिसमें कार्बनिक पदार्थ समुचित मात्रा में हो आलू की खेती के लिये सर्वोत्तम होती है। यदि भूमि अच्छे जल निकासी वाली नहीं है तो कंद विकृत और अविकसित रह जायेंगे एवं पैदावार भी घट जाती है। 5.2 से 6.5 पी.एच. मान वाली मिट्टी आलू उगाने हेतु उपयुक्त रहती है। अच्छे वायु संचार वाली मिट्टी ज्यादा अच्छी मानी जाती है।

उन्नत प्रजातियाँ :

1. अगेती किस्में (60–75 दिन में तैयार होने वाली) : कुफरी चंद्रमुखी, कुफरी ख्याति, कुफरी अशोका।
2. मध्यम किस्में (75–90 दिन में तैयार होने वाली) : कुफरी बादशाह, कुफरी बहार, कुफरी पुखराज, कुफरी पुष्कर, कुफरी अरूण, कुफरी गिरधारी, जे/92.167, कुफरी संगम (एम.पी./06–39), कुफरी लीमा।
3. पिछेती किस्में (90 से अधिक दिन में तैयार होने वाली) : कुफरी सिन्दूरी, कुफरी जवाहर, कुफरी ज्योति, कुफरी सूर्या, सी.पी.–4175।
4. प्रसंस्करण हेतु उपयुक्त किस्में : कुफरी चिप्सोना–1, कुफरी चिप्सोना–2, कुफरी चिप्सोना–3 एवं कुफरी सूर्या, कुफरी फ्राइसोना ।

बीज का आकार एवं लगाने की दूरी : अच्छी पैदावार लेने हेतु स्वस्थ बीज कंद का ही उपयोग करना चाहिए है। 25 से 100 ग्राम वजन के कंद बीजों का उपयोग किया जा सकता है। इनकी मोटाई 25 से 65 मि.मी. तक रहती है। आलू की फसल में बीज की मात्रा उपयोग में लाने वाले कंदों के भार पर भी निर्भर करती है। विभिन्न वजन के बीज कंदों को अलग–अलग दूरियों पर लगाकर भी उपयोग किया जा सकता है इसलिये किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि वे आलू के कंदों को उनके वजन के अनुसार निम्नलिखित सारणी में दर्शायी गई उचित दूरी पर लगायें :–

सारणी -1 : आलू की फसल की बुवाई हेतु वांछित कंद का भार एवं पंक्तियों में लगाने की दूरी

क्र.	वजन (ग्राम)	लगाने की दूरी (से.मी.)		बीज दर (क्विं./हेक्टे.)
		कतार से कतार	पौधे से पौधे	
1.	25 से 30	60	10	29 से 33
2.	30 से 50	60	20	25 से 41
3.	50 से 60	60	30	27 से 33

बीजोपचार : कंदों को कई बार आकार में बड़े होने के कारण काटकर लगाया जाता है, लेकिन साबुत या बिना काटे कंद लगाने से उपज अच्छी मिलती है। कंदों को लगाने से पूर्व (0.25 प्रतिशत) 2.5 ग्राम मेंकोजेब प्रति लीटर घोल बीज उपचार हेतु में 15 से 20 मिनट तक डुबोयें। एक बार तैयार किया हुआ घोल तीन बार कंद डुबोने या उपचार के लिये उपयोग किया जा सकता है। एक्रोसॉन / 1.5 एम.एल. प्रति लीटर उपयोग में लाया जा सकता है।

आलू में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन: खेत की मिट्टी जॉच कराने के बाद ही खेतों में उर्वरकों का प्रयोग करें। सामन्यतः एक हेक्टेयर आलू की फसल के लिये 150 किलो नाइट्रोजन, 100 किलो फास्फोरस एवं 100 किलो पोटाश की आवश्यकता होती है। फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा एवं नाइट्रोजन की आधी मात्रा आलू के कंदों को लगाते समय मेड़ों के दोनों तरफ की ढाल के मध्य में दें। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा मिट्टी चढ़ाते समय बुवाई के 25–30 दिन बाद नालियों में ही दें ताकि मिट्टी चढ़ाते समय खाद मिट्टी में मिल जाय और खाद एवं मिट्टी का मिश्रण मेड़ों पर जमा हो जाय।

खेत की तैयारी एवं लगाने हेतु उपयुक्त समय : खेत की जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करें। उसके उपरांत 3–4 जुताई देशी हल से करें या ट्रैक्टर से जुताई करना है तो डिस्क हैरो का प्रयोग करना चाहिऐ। आलू जमीन के अंदर तैयार होने वाली फसल है इस कारण खेत को भुरभुरा करना आवश्यक है एवं आखिरी जुताई के पहले 250 से 300 क्विंटल अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद खेत में फैला दें। खेत में 60 से.मी. के अंतराल पर 10–12 से.मी. ऊँची मेड़ें बना लें। मेड़ों को देशी हल या मेड़ बनाने वाले यंत्र (रीज़र) से भी बनाया जा सकता है। आलू की बुवाई नवम्बर के प्रथम सप्ताह से द्वितीय सप्ताह तक कर देना चाहिये।

सिंचाई एवं जलप्रबंधन: आलू उथली जड़ वाली फसल है। अतः इसे बार–बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। सिंचाई की संख्या एवं अंतर भूमि की किस्म और मौसम पर निर्भर करती है। बुवाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई कर देना चाहिए। जिससे मेंड़ों को ज्यादा नुकसान न हो। आलू की सिंचाई करते समय ध्यान रखें कि नालियां तीन चौथाई से अधिक न भर पाए।

निंदाई-गुड़ाई और मिट्टी चढ़ाना : आलू की फसल के साथ उगे खरपतवारों के नियंत्रण हेतु आलू की फसल में एक बार ही निंदाई–गुड़ाई की आवश्यकता पड़ती है, जिसे बुवाई के 25–30 दिन बाद कर देना चाहिए। निंदाई–गुड़ाई के बाद मिट्टी चढ़ा देना चाहिए। इसके बाद दूसरी बार अर्थात् बुवाई के 40–50

दिन बाद मिट्टी कंदों को ढंकने के लिये चढ़ानी चाहिये। खरपतवारों का नियंत्रण रासायनिक विधि द्वारा भी किया जा सकता है। इस हेतु बुवाई के 48–72 घण्टे के भीतर मेट्रीब्यूजीन (0.75 किग्रा/हे.) (प्री–इमरजेंस) का घोल बनाकर छिड़काव करें । इनके उपयोग के समय खेत में नमी का भी होना आवश्यक है।

हाल्म्स की कटाई: फसल अवधि पूर्ण होने के पूर्व 15 दिन पूर्व आलू के तनों की कटाई कर वही डाल दे तथा पानी सिंचाई बंद कर दे ताकि कंदो का छिलका कड़ा हो जाये।

उपज : आलू की उपज उसकी उगाई जाने वाली जाति एवं फसल की देखभाल आदि पर निर्भर करती है। सामान्य रूप में अगेती किस्मों से औसतन उपज 200 से 250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर एवं पछेती किस्मों से 300 से 350 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है।

★★★★★

प्याज

प्याज एक महत्वपूर्ण व्यापारिक फसल है। छत्तीसगढ़ में प्याज की खेती मुख्य रूप से रबी की फसल के रूप में की जाती है। छत्तीसगढ़ में इसकी खेती विगत कुछ वर्षों से खरीफ में भी की जाती है।

जलवायु : प्याज के लिये समशीतोष्ण जलवायु, जिसमें छत्तीसगढ़ क्षेत्र आता है, उपयुक्त रहती है। पौधों की बढ़वार के लिये कम तापमान व छोटे दिन तथा गाँठों के विकास के लिये अधिक तापमान व लम्बे दिनों की आवश्यकता होती है।

भूमि का चयन : प्याज की खेती हर प्रकार की भूमि में आसानी से की जाती है। खरीफ में प्याज उगाने के लिये भर्री (उच्चहन) जमीन, जिसमें पानी का निकास का उचित प्रबंध हो, उपयुक्त होती है। भूमि का चुनाव करते समय यह ध्यान रखें कि भारी वर्षा के दौरान भी पानी खेत में कतई न जमा होने पाये।

किस्म: एग्रीफाउण्ड डार्क रेड, एग्रीफाउण्ड लाईट रेड, निफा–53, अर्कानिकेतन, अर्काप्रति भीमा सुपर, भीमा किरण, भीमा श्वेता, भीमा रेड, भीमा स्वेत (सफेद किस्म)

क्यारी: पौध के लिये क्यारी ऐसे स्थान पर बनानी चाहिये, जहाँ पर सिंचाई और पानी के निकास का अच्छा प्रबंध हो। भूमि समतल तथा उपजाऊ होनी चाहिये। आसपास छाया वाले वृक्ष नहीं होने चाहिये। पौध तैयार करने के लिये 3 मीटर लंबी तथा एक मीटर चौड़ी क्यारी भूमि से लगभग 15–20 से.मी. ऊँची बना लेनी चाहिये। बीज बोने से पहले क्यारी की भली–भाँति गुड़ाई करें। उसके बाद 10–15 ग्राम दानेदार फ्यूराडान प्रति क्यारी की दर से मिट्टी में मिला देना चाहिये। क्यारी को समतल करने के बाद 8–10 से.मी. की दूरी पर 1.2 से.मी. गहरी नालियाँ बनाकर क्यारी तैयार कर लेना चाहिये।

बीज बोने का समय: खरीफ की फसल के लिए बीज की बुवाई 15 जून से 30 जून तक कर देनी चाहिये। खरीफ प्याज की फसल को बोने में किसी कारण देर होती है, तो किसी भी हालत में जुलाई के प्रथम सप्ताह तक बो देना चाहिये। रबी में 15 अक्टूबर से मध्य नवम्बर का समय अच्छा रहता है।

बीज की मात्रा : 8–10 कि.ग्रा./हेक्टेयर।

क्यारी तैयार करना: पौध शैय्या हेतु रेतीली दोमट भूमि उपयुक्त रहती हैं, जिसे लगभग 15 सेमी. जमीन से ऊँचाई पर बनाना चाहिए बुवाई के बाद शैय्या में बीजों को 2–3 सेमी. मोटी सतह जिसमें छनी हुई महीन मृदा एवं सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद से ढंक देना चाहिए। बुवाई से पूर्व शैय्या को 250 गेज पालीथीन द्वारा सौर्यकरण उपचारित कर ले।

खाद तथा उर्वरक: पहली जुताई के समय खेत में 20–25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से मिला देनी चाहिये। 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. स्फुर तथा 80 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से डालना चाहिये।

भूमि की तैयारी: प्याज के लिये एक बार गहरी जुताई करके 3–4 बार हैरो चला दें। इसके बाद पाटा चलाकर खेत को समतल कर लेना चाहिये। पौधों की रोपाई कतारें बनाकर करनी चाहिये।

उर्वरक देने की विधि: खेत की तैयारी के समय, स्फुर तथा पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की कुल मात्रा

का एक तिहाई भाग भूमि में मिला देना चाहिये। शेष नत्रजन दो भागों में बाँटकर एक भाग रोपाई के 30–40 दिन बाद तथा दूसरा भाग रोपाई के 60 दिन बाद खड़ी फसल में टॉप ड्रेसिंग के रूप में देना चाहिये।

रोपाई का समय तथा दूरी: बुवाई के 5–6 सप्ताह बाद पौध रोपने लायक हो जाती है। रोपाई की दूरी किस्म तथा गाँठों के आकार पर निर्भर करती है। साधारणत: कतार से कतार की दूरी 15–20 से.मी. तथा पौधे की दूरी 8–10 से.मी. ठीक होती है।

निंदाई-गुड़ाई: 30–35 दिन बाद एक बाद निंदाई अवश्य कर देनी चाहिये तथा दूसरी निंदाई 65–70 दिन बाद कर देने से खेत की घास नष्ट हो जाती है। अत: दो से तीन बार निंदाई–गुड़ाई करना पर्याप्त रहता है। पेन्डामेथजीन नामक दवा की एक कि.ग्रा. (सक्रिय तत्व) मात्रा 400 लीटर पानी में मिलाकर एक हेक्टेयर भूमि में रोपाई से पहले छिड़काव करने से खेत में घास पर नियंत्रण किया जा सकता है। इस समय खेत में नमी रहना चाहिये।

सिंचाई:- खरीफ मौसम में वर्षा की मात्रा तथा मिट्टी की किस्म के अनुसार सिंचाई करने चाहिये। सिंचाई की अन्तराल फसल वृद्धि की अवस्था, लगाने का मौसम, मिट्टी का प्रकार, आदि बातों पर निर्भर करता है। साधरणत: रोपाई के तुरन्त बाद एक सिंचाई की जाती है। इसके बाद रबी मौसम में 10–12 दिनों के अन्तराल सिंचाई की जाती हैं और साधरणत: 12–15 सिंचाईयॉ की जाती है। कंदों को उखाड़ने से 15 से 20 दिनों पहले सिंचाई बंद कर देनी चाहिये। इससे बल्बों के परपिक्व होने में सहायता मिलती है। फलस्वरूप बल्ब सुदृढ़ होते है, शल्क सुख जाते है।

खुदाई : बीज बुवाई के बाद खरीफ प्याज की फसल 4–5 महीने में तैयार हो जाती है, लेकिन इस फसल में पत्ती पीली न होकर हरी की हरी रहती है। उस कारण 4–5 महीने होते ही खड़ी फसल पर हर कतार पर चलना पड़ता है ताकि पौधे गर्दन से मुड़ जायँ, इसे फसल गिराना कहते हैं। फसल गिराने के करीब एक से सप्ताह बाद शल्क कन्द की खुदाई करना चाहिये।

उपज : उन्नत विधि से खेती करने से 250–300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज मिल जाती है। संग्रह करने से पहले कन्द भली–भाँति पूर्ण परिपक्त एवं छिलका सूखे हुये होने चाहिये।

कीट एवं रोगों की रोकथाम :

1. **थ्रिप्स** : ये कीड़े फसल के अधिक हानि पहुँचाते हैं। ये बहुत ही छोटे कीड़े होते हैं और पौधे का रस चूसते हैं, जिससे पत्तियाँ ऊपरी किनारे से सूखने लगती हैं। पत्तियों का रंग भूरा हो जाता है और वे ऐंठ जाती हैं।

   रोकथाम : जैसे ही ये कीड़े फसल में दिखाई दें, तुरन्त रोकथाम का उपाय करना चाहिये। इनसे बचने के लिये फसल में स्पीनोसेड 45: एस.सी. नामक दवा (0.5 मिली प्रति लीटर पानी) का घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करना चाहिये।

2. **मैगट** : यह एक मक्खी की सूँडी है, जो पौधे की जड़ों में घुसकर रस चूसती है। इसका रंग सफेद होता है। इस सूँडी से फसल को बहुत हानि होती है।

रोकथाम : मैगट से फसल को बचाने के लिये फिप्रोनिल अथवा फ्यूराडान 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से रोपाई से पहले खेत में डालना चाहिये। इस दवा को डालने के बाद 45–50 दिन तक प्याज खाने के काम में नहीं लाना चाहिये क्योंकि यह बहुत ही जहरीली दवा है। अतः प्रयोग करने में सावधानी बरतनी चाहिये।

प्रमुख रोग :

1. **बैगनी धब्बे** : प्याज का यह एक खतरनाक रोग है, जो एक फफूँदी के कारण होता है। फफूँदी पत्तियों, गाँठों और डंठलों पर आक्रमण करती है। अंत में पौधे पर भूरे रंग के धब्बे प्रकट होते है, जो नम वातावरण में फैलकर काफी बड़े हो जाते हैं। बाद में इनका रंग बैगनी हो जाता है। इससे फसल को बहुत हानि होती है।

रोकथाम : इस बीमारी से फसल को बचाने के लिये निम्न सावधानियाँ बरतनी चाहिये–

1. बीज को उपचारित करके बोना चाहिये।
2. हर साल एक ही खेत में प्याज की फसल नहीं लेनी चाहिये।
3. फसल–चक्र अपनाना चाहिये।
4. फसल पर बोर्डो मिश्रण (3:4:50) अथवा डायथेन एम 45 का (2.5 कि.ग्रा. प्रति 1000 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर) का छिड़काव 8–10 दिन के अन्तर पर करते रहना चाहिये या हैक्जाकोनाजोल 5 एस.सी. 750 मि.ली./हे का उपयोग लाभकारी होता हैं।

★★★★★

अरबी

फसल विशेषता: अरबी (घुइयाँ) को छत्तीसगढ़ में कोचई के नाम से जाना जाता है। इसे मुख्यत: कंद के रूप में उपयोग हेतु उगाया जाता है। इसकी नर्म पत्तियों से साग एवं पकौड़े बनाये जाते हैं। छत्तीसगढ़ में ग्रीष्म कालीन कोचई की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है। ग्रीष्म कालीन कोचई का बाजार मूल्य खरीफ मौसम की कोचई से अधिक मिलता है। प्रदेश में ग्रीष्म कालीन कोचई की खेती प्रमुख रूप से कवर्धा, बिलासपुर, धमतरी, महासमुन्द, राजनांदगांव एवं रायपुर जिले मे की जाती है।

उन्नतशील किस्में: पंचमुखी सी.ओ.–1, इंदिरा अरबी–1, श्री किरन (एच–13)

भूमि एवं उसकी तैयारी: अरवी की अच्छी फसल लेने के लिये बलुई–दुमट भूमि उपयुक्त होती है। दुमट एवं चिकनी दुमट में भी उत्तम जल निकास के साथ इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। रोपण हेतु खेत तैयार करने के लिये एक जुताई मिटटी पलटने वाले हल से एवं दो जुताई कल्टीवेटर से करके पाटा चलाकर मिटटी को भुरभुरी बना लेना चाहिए।

रोपण का समय: छत्तीसगढ़ में गर्मी की फसल हेतु सिंचित अवस्था तथा नदी किनारे इसकी रोपाई दिसंबर से फरवरी माह तक की जाती है। बीज दर प्रजाति तथा कंद के आकार एवं वजन पर निर्भर करती है। सामान्य रूप से 1 हेक्टेयर में रोपण हेतु 15–25 क्विंटल कंद बीज की आवष्यकता होती है।

रोपण तकनीक एवं रोपण दूरी:

1. **नाली मेड़ पद्धति**: इस विधि में अरवी का रोपण 8 से 10 सेमी गहरी नालियों में 60 ग 45 सेमी के अन्तराल पर किया जाता है। रोपण से पूर्व नालियों में ही आधार खाद एवं उर्वरक देना चाहिए। रोपण के 2 माह बाद बचे हुये उर्वरक की मात्रा देने के साथ नालियों को मिटटी से उपर तक भरें पोधों पर मिटटी चढ़ाकर मेड़ नाली पद्वति में परिवर्तित कर देना चाहिए। यह विधि रेतीली दुमट तथा दियारा (नदी किनारा) भूमि के लिए उपयुक्त है।

2. **मेड़ नाली पद्धति**: इस विधि में तैयार खेत में 60 सेमी की दूरी पर मेड़ व नाली का निर्माण किया जाता है तथा मेड़ के ढाल पर 45 सेमी की दूरी पर प्रत्येक कंद बीज को 5 सेमी की गहराई में रोपा जाता है। उर्वरक की अंतिम मात्रा देने के बाद गुड़ाई के साथ पौधों पर मिटटी चढाने का कार्य किया जाना चाहिए।

बीज दर: 25 कुन्टल कंद प्रति हेक्टेयर तथा कंदों का वजन 20–25 ग्राम होना चाहिए। रोपाई के पश्चात घास–पात से मल्चिंग करें।

खाद एवं उर्वरक: गोबर खाद या कम्पोस्ट 150–200 टन/हे., नत्रजन 100 किग्रा/हे., तीन बार में, बोवाई के समय, रोपाई के 45 दिन । फॉस्फोरस 60 किग्रा./हे. बोवाई से पूर्व देवें। पोटाश 100 किग्रा/हे. दो बार में। पहला रोपाई के पूर्व तथा बोवाई के 60 दिन बाद।

शस्य क्रियाएं एवं सिंचाई: ग्रीष्म कालीन फसल में 7–10 दिन के अंतराल पर सिंचाई आवश्यक है। परिपक्व होने पर भी अरबी की फसल हरी दिखती है। पत्तों का आकार छोटा हो जाता है। खुदाई के एक माह पूर्व

सिंचाई बंद कर देना चाहिए। जिससे नये पत्ते नही निकलते हैं और फसल पूर्ण रूप से परिपक्व हो जाता है। अच्छी उपज हेतु तीन बार निंदाई तथा दो बार गुड़ाई एवं मिटटी चढ़ाना आवश्यक होता है।

खुदाई उपज एवं भण्डारण: ग्रीष्म कालीन कोचई की फसल सिंचित अवस्था में 5–6 माह में तैयार हो जाती है। जबकि नदी किनारे रोपित फसल 4 से 5 माह में खुदाई योग्य हो जाती है तथा खरीफ फसल भी 4–6 महिने में तैयार हो जाती है। फसल की खुदाई आमतौर पर जब पत्तियाँ छोटी हो जाए और पीली पड़कर सूखने लगे तब की जाती है। खुदाई उपरान्त अरवी के मातृ कंदों और पुत्री कंदिकाओं को अलग करना चाहिए। अरवी के प्रजाति अनुसार ग्रीष्म कालीन फसल के रूप में औसतन 200–250 कुन्टल प्रति हेक्टेयर कंद उपज प्राप्त होती है।

रोग एवं कीट प्रबंधन:

1. **पत्ती अंगमारी या फाइटोफ्थोरा ब्लाईट** : इस रोग के प्रकोप से पत्तियाँ झुलस कर नष्ट हो जाती हैं। इसके नियंत्रण हेतु फफूँदनाशक जैसे मेनकोजेब 2 ग्राम/ली. दर से छिड़काव करें तथा हमेशा स्वस्थ्य बीजों का ही चयन रोपाई हेतु करें।

2. **पत्ती धब्बा रोग**: यह रोग पत्तियों के दोनों सतह को नुकसान पहुँचाती है। सबसे ज्यादा नुकसान पुरानी पत्तियों में होता है। उपरी सतह में धब्बे बिखरे हुए लाल भूरे रंग के होते हैं। जबकि निचली सतह में यह धब्बे गहरे भूरे रंग के होते है। बहुत से धब्बे आपस में मिलकर पूरी पत्ती पर फैल जाते है। जिससे पत्तियां नष्ट हो जाती हैं। डायथेन एम–45 (02 मि.ली. प्रति लीटर पानी) या ब्लाईटाक्स (02 मि.ली. प्रति लीटर पानी) को चिपकने वाला पदार्थ (टिपॉल) मिलाकर 10 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करके इस रोग से फसल को बचाया जा सकता है।

3. **तम्बाकु की इल्ली**: कोचई को हानि पहुंचाने वाला यह प्रमुख कीट है इसकी इल्लियाँ पत्तियों के हरित भाग को खा जाती है। जिससे पत्तियों की सिरायें दिखने लगती है और धीरे धीरे पूरी पत्ती सूख जाती है। कम संख्या में रहने पर इनको पत्ते समेत निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए। अधिक प्रकोप होने पर प्रभावित पौधों पर प्रोफेनोफाम 50 ई.सी. 2 मिली. प्रति लीटर पानी का घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए।

4. **एफिड (माहो) एवं थ्रिप्स**: एफिड और थ्रिप्स रस चूसने वाले कीट है और पत्तियों का रस चूस कर नुकसान पहुँचाते है। अधिक प्रकोप होने पर पत्तियाँ सूख जाती है। डाइमिथीएट (1.0 मिली. लीटर पानी के साथ) 15 दिन के अन्तराल पर दो से तीन छिड़काव कर रस चूसने वाले कीटों को नियंत्रित किया जा सकता है।

उपज : अरबी की औसतन उपज 28–30 टन/हे. प्राप्त होती है।

★★★★★

पालक

पालक महत्वपूर्ण पत्तेदार सब्जी हैं। जिसमें कैल्शियम और विटामिन–ए अधिक मात्रा में तथा स्फुर, लोहा और विटामिन–सी मध्यम मात्रा में पाया जाता है। इसकी खेती हरी पत्तियों के लिये एकवर्षीय तथा बीज उत्पादन के लिये बहुवर्षीय की जाती है।

जलवायु : इसकी खेती शीतकालीन फसल के रूप में की जाती है, क्योंकि तापमान अधिक होने पर इसकी बढ़वार रुक जाती है, इसकी खेती अधिक तापमान ना होने वाले जो इसकी खेती में वर्ष भर की जा सकती है। अत्यधिक तापमान होने पर बोल्टिंग अधिक होती है, जिससे उपज में कमी आती है।

भूमि : इसकी सफल खेती के लिये उचित जल निकास वाली चिकनी दोमट भूमि उपयुक्त होती है। भूमि का पी.एच. मान 6 से 7 के मध्य होना चाहिये। भूमि का पलेवा करके जब वह जुताई योग्य हो जाय तब मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करें। इसके बाद 2 बार हैरो या कल्टीवेटर चलायें। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य चलायें ताकि मिट्टी भुरभुरी और समतल हो जाये।

किस्में :छत्तीसगढ़ के लिये प्रचलित किस्में हैं :-

1. **ऑलग्रीन**: शीघ्र तैयार होने वाली (40 दिन) तथा अधिक पत्तियाँ देने वाली किस्म हैं। इसे वर्ष भर लगा सकते हैं। पत्तियाँ समान रूप से हरी होती हैं।
2. **पूसा ज्योति** : इसकी पत्तियाँ मुलायम, मोटी तथा माँसल होती हैं। ऑलग्रीन किस्म की तुलना में पोषक तत्व अधिक होते हैं। बोल्टिंग देर से होती है और 6 से 8 बार काट सकते हैं।
3. **पूसा हरित**: यह मीठी पालक एवं लोकल पालक की संकर किस्म है। पत्तियाँ मोटी, चौड़ी, बोल्टिंग देर से होती है तथा अधिक उपज देती है।

बोने का समय : पालक की बुवाई वर्ष भर कर सकते हैं परन्तु जनवरी –फरवरी, जून–जुलाई

और सितम्बर–अक्टूबर में छत्तीसगढ़ में अच्छी पैदावार के लिये बुवाई की जाती है।

बीज की मात्रा : 25 से 30 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होती है।

बुवाई की विधि :

1. **छिटकवाँ विधि**
2. **कतार बुवाई विधि:-** इस विधि हेतु पंक्तियों के बीच की दूरी – 20–25 से.मी. एवं पौधो के बीच की दूरी 20 से.मी. उपयुक्त होता है।

खाद व उर्वरक: देशी और विलायती पालकी की अधिक पैदावार लेने के लिये खाद और उर्वरकों को सन्तुलित मात्रा में डालना अत्यन्त आवश्यक है। अच्छी पैदावार के लिये गोबर की खाद 25–30 टन/हे., नत्रजन 80 किलोग्राम/हे., स्फुर 50 किलोग्राम/हे. एवं पोटाश 60 किलोग्राम/हे. की मात्रा देनी चाहिए।

खेत की तैयारी के समय गोबर की खाद को भूमि पर समान रूप से बिखेर कर मिट्टी पलटने वाले

हल से जुताई करें। स्फुर तथा पोटाश की पूरी मात्रा और नत्रजन की 20 किलोग्राम मात्रा मिश्रण बनाकर अंतिम जुताई के समय भूमि में डाल देना चाहिये। नत्रजन की शेष 60 किलोग्राम मात्रा को 4 बराबर भागों में बाँटकर, प्रत्येक कटाई के उपरान्त खड़ी फसल में डालनी चाहिये।

सिंचाई : बुवाई के पश्चात् तत्काल सिंचाई करने से अंकुरण अच्छा होता है। भूमि में पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिये 7–8 दिन के अंतर पर सिंचाई करते रहें।

निंदाई-गुड़ाई : प्रारंभिक अवस्था में निंदाई–गुड़ाई आवश्यक है। यदि फसल की बुवाई छिटकवाँ विधि से की हो तो खुरपी से तथा पंक्तियों में बुवाई हो तो हैण्ड–हो की सहायता से करते हैं।

कटाई : बुवाई के 20–25 दिनों बाद पत्तियों की पहली कटाई की जाती है। पत्तियों की कटाई उसकी कोमल अवस्था में करनी चाहिये। इस प्रकार 5–6 कटाई की जा सकती है।

उपज : पालक की अच्छी फसल से 80 से 100 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हरी पत्तियाँ ली जा सकती हैं।

कीट और रोग :

1. **चैंपा** : यह पालक की फसल को सबसे अधिक हानि पहुँचाता है। ये छोटे कीड़े पत्तियों के मुलायम भागों में घुसकर इसका रस चूसते हैं। इसकी रोकथाम के लिये इमिडाक्लोप्रिड 0.5 प्रतिशत का घोल छिड़कना चाहिये। इसके 6 से 8 दिनों पश्चात पत्तियों की कटाई करनी चाहिये।

2. **पत्तियाँ खाने वाले कीट** : ये पत्तियों को खाती है, जिससे उसमें छेद भी बन जाता है, जिससे इसकी गुणवत्ता खराब हो जाती है तथा उपज भी कम हो जाती है। इसकी रोकथाम भी प्रोपेनौफोस 0.1 प्रतिशत घोल से की जा सकती है।

3. **आर्द्र गलन** : इस रोग के कारण बीज के अंकुरित होते ही पौधे संक्रमित हो जाते हैं। कभी–कभी अंकुर भूमि से बाहर नही निकल पाता है और बीज पूरा ही सड़ जाता है। पौधे का अचानक गिर पड़ना और सड़ जाना आर्द्र गलन का प्रमुख लक्षण है। इसकी रोकथाम के लिये केप्टान या सेरेसान द्वारा 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीज को उपचारित करके बोयें।

4. **सरकोस्पोरा लीफ स्पॉट** : पुरानी पत्तियों में छोटा गोलाकार स्पॉट, जो मध्य में राख जैसा तथा किनारे पर गहरा बैगनी या लाल–बैगनी होता है, इसके कारण पत्तियाँ सिकुड़कर सूख जाती हैं। इसकी रोकथाम बाविस्टीन 0.05: से बीजोपचार तथा डाइथेन एम.–45 का 0.2: छिड़काव करके किया जा सकता है।

★★★★★

मेथी भाजी

यह पूरे देश में उगाई जाने वाली बहुत आम हरी पत्तेदार साग है। इसके पत्ते सब्जी के तौर पर और बीज स्वाद बढ़ाने के लिए प्रयोग किए जाते हैं। मेथी के पत्तों और बीजों के औषधिय गुण भी हैं, जो कि रक्तचाप और कोलैस्ट्रोल को कम करने में सहायक होते हैं। इसे चारे के तौर पर भी प्रयोग किया जाता है।

जलवायु- मेथी की अच्छी उपज के लिए ठंडी जलवायु की आवश्यकता पड़ती है । कम तापमान और औसत बारिश वाले क्षेत्र उपयुक्त रहते हैं। पाले से यह दूसरी फसलों के मुकाबले कम प्रभावित होती है तो वहीं वातावरण में ज्यादा नमी होने या फिर बादलों के घिरे रहने से सफेद चूर्णीय रोग एवं चैंपा कीट प्रकोट का खतरा रहता है 22 से 28 डिग्री से.ग्रे. तापमान अंकुरण के लिए अच्छा होता है जबकि पौधों के विकास के लिए 15 से 28 से.ग्रे. तापमान की आवश्यकता होती है।

मिट्टी:- इसे सभी प्रकार की मिट्टी जिनमें कार्बनिक पदार्थ उच्च मात्रा में हो, उगाया जा सकता है पर यह अच्छे निकास वाली बालुई और रेतली बालुई मिट्टी में अच्छे परिणाम देती है। यह मिट्टी की 5.3 से 8.2 पी एच को सहन कर सकती है

प्रसिद्ध किस्में -

कसूरी मेथी, मेथी नंबर 47, आर.एम.टी. 305, आर.एम.टी. 01, पुसा अर्ली बन्चिंग, राजेन्द्र क्रांति।

ज़मीन की तैयारी:- मिट्टी के भुरभुरा होने तक खेत की दो तीन बार जोताई करें उसके बाद पाटे की सहायता से ज़मीन को समतल करें। आखिरी जोताई के समय 10–15 टन प्रति एकड़ अच्छी तरह से गली हुई रूड़ी की खाद डालें। बिजाई के लिए 3ग 2 मीटर समतल बीज बेड तैयार करें।

बोने का समय:- इस फसल की बुवाई के लिए अक्तूबर का आखिरी सप्ताह से नवंबर का पहला सप्ताह तक अच्छा रहता है।

दूरी: पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22.5 से.मी एवं पौधों से पौधों कि दूरी 15 से.मी. उपयुक्त होती है।

बीज की मात्रा:- एक एकड़ खेत में बुआई के लिए 12 किलोग्राम बीजों की मात्रा पर्याप्त होती है।

बीज की गहराई : बीज को 3–4 सैं.मी. की गहराई पर बोयें।

बीज का उपचार:- बुआई से पहले बीजों को 8 से 12 घंटे के लिए पानी में भिगो दें। बीजों को मिट्टी से पैदा होने वाले कीट और बीमारियों से बचाने के लिए थीरम 4 ग्राम और कार्बेनडाज़िम 50 प्रतिशत डब्लयु पी 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज से उपचार करें। रासायनिक उपचार के बाद एज़ोसपीरीलियम 600 ग्राम + ट्राइकोडरमा विराइड 20 ग्राम प्रति एकड़ से प्रति 12 किलो बीजों का उपचार करें।

खरपतवार नियंत्रण:- खेत को खरपतवार मुक्त करने के लिए एक से दो बार गुड़ाई करें। पहली गुड़ाई बोने के 25–30 दिनों के बाद और दूसरी गुडाई पहली गुड़ाई के 30 दिनों के बाद करें।

सिंचाई:- बुआई के समय खेत में नमी आवश्यक है मेथी की उचित पैदावार के लिए आवश्यकतानुसार समय–समय पर सिंचाई सुनिश्चित करें एवं फली के विकास और बीज के विकास के समय पानी की कमी

नहीं होने देनी चाहिए क्योंकि इससे पैदावार में भारी नुकसान होता है। बीज के लिए फसल ली जा रही है, तो बुवाई के 1 महीने बाद और फूल बनते समय सिंचाई जरूर करनी चाहिए। फलियां भरते वक्त भी 1 सिंचाई करने से बीजों की मात्रा बढ़ती है।

हानिकारक कीट और रोकथाम:- यदि चेपे का हमला दिखे तो इमीडाक्लोप्रिड 3 मि.ली को 10 लीटर पानी में मिलाकर छिडकाव करें।

बीमारियां और रोकथाम:- फसल को जड़ गलन से बचाने के लिए मिट्टी में नीम केक 60 किलोग्राम प्रति एकड़ में डालें। बीज उपचार के लिए ट्राइकोडरमा विरीडी (4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) का उपयोग करें। खेत में जड़ गलन दिखाई देने पर इसकी रोकथाम के लिए कार्बेनडाज़िम 5 ग्राम या कश्वपर अश्वक्सीकलोराइड 2 ग्राम को प्रति लीटर पानी में मिलाकर डालें।

फसल की कटाई:- पत्तीयों के उपयोग के लिए कटाई बुवाई के 20–25 दिनों के बाद करें।

कटाई- भाजी वाली फसल की पहली कटाई बुवाई के 3 हफ्ते बाद की जाती है, जब पौधों की ऊंचाई करीब 25–30 सेंटीमीटर तक हो जाती है। कसूरी मेथी की कटाई देर से की जाती है। अगर मेथी की कटाई ज्यादा की जाएगी, तो उसका बीज कम मिलता है। अगर 1 बार कटाई के बाद बीज लिया जाए, तो औसत पैदावार करीब 6–8 क्विंटल प्रति हेक्टेयर मिलती है और 4–5 कटाइयां की जाएं तो यही पैदावार घट कर करीब 1 क्विंटल प्रति हेक्टेयर रह जाती है। भाजी या फिर हरी पत्तियों की पैदावार करीब 70–80 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक मिलती है।

भाजी हेतु ली जाने वाली फसल में दवा का छिड़काव नहीं करना चाहिए यदि आवश्यक हो तो जैविक कीटनाशक एवं रोग नियंत्रक का प्रयोग कर सकते है।

★★★★★

धनिया

इसके बीजों, तने और पत्ते लगभग सभी भागों का उपयोग किया जाता है ।

जलवायु- धनियाँ की खेती उष्ण और मध्यम जलवायु वाले क्षेत्रों में जहाँ तापमान बहुत अधिक न हो और वर्षा का वितरण ठीक हो, सफलतलापूर्वक उगाया जा सकता है। शुष्क और ठंडा मौसम अधिक उपज के लिए अनुकूल होता है। फूलने के समय बादल–पानी रहे तो चैंपा (मैनी) और बीमारियों का प्रकोप बढ़ जाता है। दाना बनते समय अधिक तापमान एवं तेज हवा से उपज में विपरीत प्रभाव पड़ता है।

भूमि- वैसे धनियाँ की खेती सभी प्रकार की भूमियों में की जा सकती है। अच्छे जल–निकास और अधिक जीवांशपदार्थ वाली दोमट भूमि सर्वोत्तम होती है।

उन्नत किस्में- छत्तीसगढ़ में उगाई जा सकने वाली प्रमुख जातियाँ है – छत्तीसगढ.धनियाँ–1, छत्तीसगढ़ चन्द्रहासिनी धनियाँ–2, गुजरात धनियाँ–1, गुजरात धनियाँ–2, राजेन्द्र उदयपुर धनियाँ–20, हिसार धनियाँ–246 आदि।

बुआई का समय- धनियाँ की बुआई का समय उसको लगाने के उद्देश्य(बीज के लिए या पत्तियों के लिए) पर निर्भर करता है। पत्तियों के लिए इसे खरीफ एवं रबी दोनो मौसम में लगाया जा सकता है। बीज के लिए धनियाँ की बुआई का उचित समय अक्टूबर से नवम्बर तक है।

बीज की मात्रा- धनियाँ की सफल खेती के लिए बीज की मात्रा उसको लगाने के उद्देश्य, विधि और बीज की किस्म पर निर्भर करती है। सामान्यतः 6–8 किलो प्रति एकड़ बीज लगता है। छिटकवां विधि से धनियाँ को बोने पर 8–10 किलो प्रति एकड़ बीज की आवष्यकता होती है।

बीजोपचार- धनियाँ के बीज को रगड़कर या मसलकर दो भागों में तोड़ लेना चाहिये। इससे अंकुरण अच्छा होता है और बीज भी अपेक्षाकृत कम लगता है। बीज को बोने के पूर्व 10–12 घण्टे तक साफ पानी में डुबोकर रखना चाहिये। अंकुरण लगभग 10 दिनों में हो जाता है। सुखे बीजों को बोने पर अंकुरण 20–21 दिनों बाद होता है। बीजों को खेत में बोने के पूर्व डाइथेन एम–45 या थीरम की 3 ग्राम प्रति किलो बीज के दर से उपचारित करना चाहिये।

भूमि की तैयारी- खेत कि अंतिम जुताई से पहले गोबर की अच्छी सड़ी खाद समान रूप से बिखेर देना चाहिये। उसके बाद एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके 2–3 जुताई कल्टीवेटर या हैरो चलाकर मिट्टी को भुरभुरा कर लेना चाहिये। ध्यान रखे कि प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगाएँ ताकि मिट्टी भूरभुरी हो जावे।

बुवाई की विधि :- पत्तियों के लिए धनियाँ की बुआई सामान्यतः छिटकवां विधि से की जाती है। बीज के लिए धनियाँ के बीजों की बुआई पंक्तियों एवं छिटकवां दोनो विधि से की जा सकती है। छिटकवां विधि से बुआई करने पर कहीं ज्यादा तो कहीं कम पौधें उगते है। निंदाई–गुड़ाई, कीटनाशक आदि के छिड़कांव में भी कठिनाई होती है। अतः धनियां की बुआई सदैव पंक्तियों में करना चाहिये। इसके खेत में सिंचाई की सुविधानुसार क्यारियाँ बनाकर बीज को कतार में 30 से.मी. की दूरी पर और पौधों से पौधों की दूरी 10 से. मी. की दूरी पर कुड़ी या कुड़ बनाकर 2.5 से.मी. से 3 से.मी. गहराई पर बोना चाहिये।

खाद एवं उर्वरक- सिंचित अवस्था में गोबर की खाद (अच्छी सड़ी हुई) 80–100 क्विंटल/ हेक्टेयर, नाइट्रोजन–20 किलो/ हेक्टेयर, फास्फोरस –30 किलो/हेक्टेयर, पोटाश –20 किलो/हेक्टेयर देना चाहिए। गोबर की खाद, फास्फोरस, पोटाश की संपूर्ण मात्रा एवं नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा बोआई के समय तथा नत्रजन की शेष मात्रा दो तिहाई मात्रा को दो भागों में बांटकर क्रमशः बोने के 30 दिन एवं 60 दिन बाद देना चाहिये।

सिंचाई - फसल में प्रथम सिंचाई बीज बोने के तुरंत बाद करते हैं। अंकुरण के पश्चात कटाई तक 4–6 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। पोधों की बढ़वार, फूल आने व दाना बनते समय भूमि में पर्याप्त नमी आवश्यक होती है। साथ ही साथ जल–निकास की भी उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए।

कटाई का समय - साधारणतः बुआई के 40–45 दिनों बाद धनियाँ की पत्तियों की कटाई के लिए तैयार हो जाती है। हरी पत्तियों की पहली कटाई के 15 दिन अंतर से करते रहते हैं जब तक उसमें फूल न आवे। इस प्रकार लगभग 3–4 कटाई पत्तियों की मिल जाती है। बीज के लिए बोई गयी फसल में 40–50 दिन बाद ऊपरी 3–4 शाखाओं की हल्की कटाई करना चाहिये। जिससे अधिक शाखाएँ प्राप्त हो। जब 50 प्रतिशत दानों मे पीलापन आ जाए तो धनियाँ की फसल की कटाई कर देना चाहिये। कटाई पश्चात छायादार स्थान में रखकर सुखाएँ और उसकी मिंजाई कर लेना चाहिये।

उपज - धनियाँ की उपज किस्म, लगाने का समय आदि पर निर्भर करता है समुचित कृषि कियाएँ अपना कर सामान्यतः एक एकड़ से 4–5 क्विंटल दाने के उपज एवं 20–22 क्विंटल पत्तियों की उपज प्राप्त की जा सकती है।

प्रमुख कीट एवं रोग -

भाजी हेतु ली जाने वाली फसल में दवा का छिड़काव नहीं करना चाहिए यदि आवश्यक हो तो जैविक कीटनाशक एवं रोग नियंत्रक का प्रयोग कर सकते है। धनियाँ की फसल में कीटों का विशेष प्रकोप नहीं देखा गया है लेकिन सफेद मक्खी एवं एफिड मैनी से कुछ सीमा तक नुकसान होता है। इन कीटों के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 0.5 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर इन कीटों को नियंत्रित किया जा सकता है।

उकठा रोग (विल्ट) - इस बीमारी में पौधे अचानक मुरझाने लगते हैं, इससे 40–45 प्रतिशत तक नुकसान देखा गया है। डाइथेन एम.–45 2 ग्राम प्रति किग्रा की दर से बीज को उपचारित कर नियंत्रित कर सकते है।

★★★★★

छत्तीसगढ़ सफेद बैगन

इंदिरा बरबट्टी लाल

इंदिरा मिर्च-1

इंदिरा मिर्च-3

इंदिरा सेम-1

छत्तीसगढ़ परपल सेम

टिप्पणी

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)